※ श्रीमते रामानुजाय नमः ※

श्रीरामानुजाब्द–९७९

अगस्त–१९९५

अनन्त सन्देश

अनोखो जायौ ललना।
मैं वेदन में सुनि आई॥

वर्ष–२४ मासिक प्रकाशन अंक–३

श्रीवेंकटेश देवस्थान ८०/८४ फणसवाड़ी, बम्बई—२

विषयानुक्रमणिका

वार्षिक भेंट
भारत में २५)रु०
आजीवन ३०१)रु०

कर्म हमारा जीवन है।
धर्म हमारा प्राण है।।

साधारण प्रति
भारत में
६)०० रु०

।। श्रीमते रामानुजाय नमः ।।

अनन्त सन्देश

मासिक प्रकाशन

अनन्ताचार्यवर्याणामनन्ताऽद्भुतभावदः। जीयादनन्तसन्देशः सदनन्तप्रभावतः ।।

ईशानां जगतोऽस्य वेङ्कटपतेर्विष्णोः परां प्रेयसीं, तद्वक्षःस्थलनित्यवासरसिकां तत्क्षान्तिसम्बर्धिनीम् ।
पद्मालंकृतपाणिपल्लवयुगां पद्मासनस्थां श्रियं, वात्सल्यादिगुणोज्ज्वलां भगवतीं वन्दे जगन्मातरम् ।।

वर्ष २४ सम्वत् २०५२ भाद्रपद | श्रीधाम वृन्दावन | अगस्त १९९५ अङ्क-३

* श्रीकृष्णं वन्दे जगद्गुरुम् *

तमद्भुतं बालकमम्बुजेक्षणं चतुर्भुजं शङ्खगदार्युदायुधम् ।
श्रीवत्सलक्ष्मं गलशोभिकौस्तुभं पीताम्बरं सान्द्रपयोदसौभगम् ।।
महार्हवैदूर्यकिरीटकुण्डलत्विषा परिष्वक्तसहस्रकुन्तलम् ।
उद्दामकाञ्च्यङ्गदकङ्कणादिभिर्विरोचमानं वसुदेव ऐक्षत ।।
(श्रीमद्भा० १०।३।९-१०)

अर्थ श्रीवसुदेवजी ने देखा कि वह बालक बहुत ही अद्भुत है । नेत्र कमल के पत्ते के समान विशाल हैं, चार हाथों में शङ्ख, चक्र, गदा आदि आयुध शोभित हैं, वक्षःस्थल में श्रीवत्सचिह्न विराजमान है, गले में कौस्तुभमणि की अपूर्व कान्ति है, पानी भरे बादल के समान श्यामशरीर में पीताम्बर शोभायमान है । असंख्य अलकों की अवली पर महामूल्य के वैडूर्यमणि जड़ित किरीट मुकुट व कुण्डलों की प्रभा पड़ने से उसकी अद्भुत शोभा है । अति उत्तम मेखला, अंगद और कङ्कण आदि अलकारों से शरीर अत्यन्त मनोहर हो रहा है ।

卐

सम्पादकीय

अखिलरसामृत-सिन्धु भगवान् श्रीकृष्ण की जयन्ती इस वर्ष मथुरा में बड़ी हलचल के साथ मनायी गई। आसुरी प्रकृति का कंस 'क्षणेंरुष्टा क्षणें तुष्टा' अस्थिर बुद्धि का था। जो एक क्षण पूर्व अपनी बहिन को बड़े आयोजन के साथ रथारूढ़ हो स्वयं विदा करने में तत्पर था, वही एक आकाशवाणी को सुनकर 'अस्यास्त्वष्टमोगर्भः हन्ता यां वहसेऽबुधः' 'भगिनी हन्तुमारेभे खड्गपाणी कचेऽग्रहीत्' कि इसका आठवां बालक उसे मारेगा झट निश्चय कर बैठा कि 'न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी' न देवकी रहेगी न इसके बालक होगा, न मुझे उससे प्राणों का भय होगा। उसने देवकी का जूड़ा पकड़कर खड्ग निकाल ली, उसका मस्तक काटने को। वसुदेवजी ने बड़ी शान्ति से उसे समझाया। वसुदेवजी सत्यवादी थे। कंस आ गया उनके समझाने में। किन्तु आसुरी प्रकृति के लोग सात्विक नहीं होते हैं। वे असत् होते हैं और इन्द्रियों के परतन्त्र होते हैं। किन्तु नारदजी को मौका मिला, उन्होंने कंस को उलटा-सीधा समझाया। कंस ने वसुदेव देवकी को कारागृह में डाल दिया और वसुदेवजी जो-जो बालक देवकी के होता जाय, उसे कंस को दे दें, कंस उन बालकों को मारता गया।

अब अष्टम गर्भ की पारी आई। भगवान् जगन्मंगल, अच्युत के अंश रूप श्रीकृष्ण देवकी के गर्भ से इस प्रकार आविर्भूत हुए जैसे पूर्व दिशा में चन्द्र प्रकट होता है। वह अद्भुत बालक था, चतुर्भुज नारायण ही थे। वसुदेव देवकी की प्रार्थना पर द्विभुज होकर श्रीकृष्ण रूप से बालक बने। उन्होंने आज्ञा दी 'यदि कंसाद् बिभेषि त्वं तर्हि मां गोकुलं नय' यदि कंस से डरते हो तो मुझे गोकुल पहुंचा दो। भगवान् की माया। वसुदेवजी

श्रीकृष्ण जयन्ती

ने श्रीकृष्ण को गोकुल पहुँचा दिया और वहाँ से कन्या को ले आये तथा पूर्ववत् कारागृह में बन्दी हो गये।

मथुरा में श्रीकृष्ण का जन्म हो गया।

एष नारायणः साक्षात् क्षीरार्णवनिकेतनः।
नागपर्यङ्कमुत्सृज्य ह्यागतो मथुरां पुरीम्॥

श्रीकृष्ण साक्षात् नारायण ही हैं जिनका आवास क्षीरसमुद्र है, वहाँ से वे शेषशैय्याको त्यागकर मथुरापुरी में आये। श्रीकृष्ण के जन्म से ही अतिमानुष चरित्र हैं। पूतना को मातृगति प्रदान करना प्रथम कदम था। इससे बढ़कर दयालुता किसी अन्य में देखने को नहीं आती है।

श्रीकृष्ण की अद्भुत बाल-लीलाओं ने जैसे शकटासुरसंहार, तृणावर्त वध, श्रीकृष्ण की जंभाई लेते समय यशोदा को मुँह में आकाश, पाताल का दर्शन, मृद्भक्षण प्रसंग से विश्वरूप दर्शन, ऊखल बन्धन-लीला, वत्सासुर वध, बकासुर अघासुर आदि का वध, कालियमर्दन, प्रलम्बासुर वध आदि सात वर्ष की अवस्था में गोवर्धन धारण लीला, इन सबसे उनके प्रति मानवीय प्राकृतबुद्धि से सोचने की आवश्यकता ही नहीं रहती।

सबसे बड़ा श्रीकृष्ण का सन्देश 'गीता' है। जो वेदशास्त्रों का निचोड़ है। जिसके हृदयंगम करने से मनुष्य, मनुष्य बन जाता है। वह श्रीकृष्ण रस स्वरूप है। 'रसो वै सः' 'रसं ह्येवायं लब्ध्वा आनन्दी भवति' उस रस को प्राप्त कर प्राणी आनन्द मग्न हो जाता है। भगवान् में छः गुण हैं 'ऐश्वर्यस्य समग्रस्य' वे परिपूर्ण रूप से निवास करते हैं। और विकासशील होते रहते हैं। भगवान् सत्, चित् भी हैं। सत् अर्थात् सदा वर्तमान हैं। चित्=चैतन्य स्वरूप हैं। आनन्द

स्वरूप हैं। अर्थात् षड् ऐश्वर्य परिवर्धनशील सदैव उसमें रहते हैं।

आज हमें श्रीकृष्ण के आसुरी सम्पत्ति संहारक रूप की आवश्यकता है। आज हम श्रीकृष्ण से प्रार्थना करें कि वे हमारी दैवी सम्पत्तिकी रक्षाकर उसे सम्वर्धनशील करें तभी देव, ब्राह्मण, वेद, गौ-माता, अग्नि धर्म की रक्षा हो सकती है अन्यथा आसुरी सम्पत्ति हमें इसी प्रकार त्रास देती रहेगी।

दि० २६ जुलाई '९५ को श्रीअखण्डानन्दजी के आश्रम में श्रीअखण्डानन्द सरस्वतीजी महाराज का ८४ वीं आनन्द जयन्ती मनाई गई, विद्वानों को बोलने का विषय था 'जीवन में आनन्द की अभिव्यक्ति' मानव जीवन जब तक श्रीकृष्ण आनन्द घन की लीला, नाम, धाम, गुण आदि का आश्रय नहीं लेता तब तक उसे आनन्द कहाँ। श्रीअखण्डानन्दजी के जीवन में भगवद्गुणऐश्वर्य, यश, तेज, बल आदि का अंशरूप से संवर्धनशील रहना ही उनके आनन्द स्वरूप की अभिव्यक्ति है। उन्होंने अपने जीवन में इतना लिखा कि वह लेख माला ही उनके आनन्द स्वरूप की अभिव्यक्ति करती रहेगी, इतना यश प्राप्त किया जो असाधारण ही कहा जायगा। ऐश्वर्यंतो कई पीढ़ियों तक आनन्द प्रदान करता रहेगा। हमारी श्रद्धाञ्जलि उनके श्री-चरणों में समर्पित है।

सम्पादक—

अनन्त-सन्देश के प्रेमी पाठकों से निवेदन

'अनन्त-सन्देश' काञ्ची प्रतिवादि भयङ्कर जगद्गुरु वै०वा० श्री १००८ श्रीस्वामी अनन्ताचार्य जी महाराज की कीर्ति का स्तम्भ हैं। उनके शिष्यों-प्रशिष्यों का कर्तव्य है कि वे अपने आचार्यश्री का यश यावद्बुद्धिबलोदय संवर्धन करें। इसके लिये ही 'अनन्त-सन्देश' का प्रकाशन किया जाता है। 'गुरुं प्रकाशयेद्धीमान्' अपने अज्ञाननिवर्तक आचार्यश्री का यथेच्छ प्रकाश करना चाहिये।

पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन कितना मँहगा हो गया है यह सम्बन्धित व्यक्तियों से छिपा नहीं है। अतः इस पत्र का मूल्य बढ़ाया गया है फिर भी अन्यान्य पत्रिकाओं के देखते हुए अधिक नहीं है। अतः आप इस पत्र के ३०१)रु० के आजीवन सदस्य अवश्य बनें। एक वर्ष के लिये २५)रु० इसकी भेंट है। जिनकी भेंट आजीवन या वार्षिक न भेजी गई हो वे कृपया भेंट भेजकर हमारी व्यवस्था में सहयोग प्रदान करें।

—सम्पादक

श्रीवृन्दावन में श्री श्रीलक्ष्मीनारायण महायज्ञ का भव्य आयोजन

भगवान् श्रीकृष्ण की पावन क्रीड़ास्थली श्रीधाम-वृन्दावन में विगत दशाब्द से मनाये जारहे श्रीविनायक जयन्ती महोत्सव के पावन पर्व पर इस वर्ष भगवान् श्रीलक्ष्मीनारायण महायज्ञ का भव्य आयोजन दि० २९ से ३१ अगस्त १९९५ तक मनाया जारहा है। इस अवसर पर विराट् सन्त-सम्मेलन भी होगा, जिसमें देश के ख्याति प्राप्त सन्त भाग ले रहे हैं। सन्त-सम्मेलन में प्रमुख रूप से ज०गु०रा० स्वामी श्रीसुदर्शनाचार्यजी फरीदाबाद, ज०गु०रा० पूज्य श्रीस्वामी श्रीनिवासाचार्य जी महाराज इन्दौर, ज०गु०रा० त्रिदण्डी श्रीदेवनारायणाचार्यजीयर महाराज हरिदेवमन्दिर,वृन्दावन, व्रजके सन्त श्रीगुरुशरणानन्द जी महाराज, विद्वान् सन्त पं० श्रीश्रीमन्नारायणजी भक्तमाली 'मामाजी' बक्सर वाले आदि उपस्थित होंगे। ऐसे दिव्य महोत्सव में आप भी सादर आमन्त्रित हैं, भगवत-भागवत सेवा का अवसर भाग्य से ही मिलता है।

आचार्य नरेशचन्द्र शर्मा, वृन्दावन

॥ श्रीमते रामानुजाय नमः ॥

तिरुप्पल्लाण्डु नामक मङ्गलाशासन दिव्य-प्रबन्ध की

भूमिका

卐

यह दिव्य प्रबन्ध श्रीविष्णुचित्त (श्रीभट्टनाथ) योगीन्द्र प्रणीत दो दिव्य प्रबन्ध में से प्रथम है। यद्यपि दिव्यसूरि अवतार परम्परा में श्रीविष्णुचित्त सातवें माने जाते हैं, तथापि द्राविडाम्नाय रूप सकल दिव्य-प्रबन्धों में यह प्रबन्ध प्रथम स्थान प्राप्त करता है। संस्कृत वेदपाठ के उपक्रम में जैसे 'ॐ' का अनुसन्धान किया जाता है उसी तरह द्राविडवेद के उपक्रम में इस दिव्य प्रबन्ध का मङ्गलाशासनात्मक होने से प्रथम पारायण (पाठ) नियत है ऐसी सम्प्रदाय परम्परा है।

यहाँ पर 'पल्लाण्डु' शब्द 'मङ्गलाशासन' का पर्यायवाचक है तथा 'तिरु' शब्द श्रीशब्द का पर्यायवाचक है। अतः 'तिरुप्पल्लाण्डु' शब्द का अर्थ 'श्रीमङ्गलाशासन' सिद्ध हुआ। श्रीभागवत, श्रीभाष्य इत्यादि की तरह श्रीशब्द यहाँ पर मांगलिक है, लक्ष्मी का वाचक नहीं है। 'शरदश्शतं विजयी भव' इस प्रकार भगवान् को उद्देश्य करके श्रीभट्टनाथ मुनि के द्वारा जो मङ्गलाशासन किया गया उसका प्रतिपादक यह दिव्य प्रबन्ध है। किसलिये तथा कब मङ्गलाशासन किया गया, इसका वर्णन मुनिवर के वैभव में किया गया है।

अवाप्त समस्त कामत्व सर्वरक्षकत्व से प्रसिद्ध भगवान् की सन्निधि में स्वयं अपने आप की मंगल प्रार्थना तो युक्त है लेकिन वैसी पद्धति को त्यागकर मंगलनिधि भगवान् का मंगलाशासन कैसे किया ? ऐसी शङ्का होने पर पूर्वाचार्यों के द्वारा इसका समाधान किया गया है—

सज्जन भक्तों की दशा दो प्रकार की होती है – ज्ञानदशा और प्रेम दशा। ज्ञानदशा में रक्ष्य-रक्षक भाव व्यवस्थित है। 'भगवान् सर्वरक्षक हैं और हम सब भगवान् के द्वारा रक्ष्य हैं ? इसलिये भगवत्सन्निधि से हमारा मंगल हो।' ऐसा अनुसन्धान और तन्मूलक प्रार्थनादि ज्ञानदशा में प्राप्त होती है। किन्तु प्रेमदशा में इसके ठीक विपरीत होता है। रक्ष्यरक्षक भावानुसन्धानविपरीत क्रम को प्राप्त हो जाता है। यहाँ परमात्मारक्ष्य और भक्त रक्षक बन जाता है। सर्वेश्वर परमात्मा के ज्ञान-शक्त्यादि गुण समूह को विस्मृत करके उनके सौन्दर्य, लावण्य, सौकुमार्यादि गुणों का कईबार अनु-सन्धान करके प्रेम परवश द्रवीभूत हृदय वालों का भगवान् में रक्षकत्व भाव समाप्त हो जाता है। वे भगवान् की रक्षा करने के लिये प्रयत्न करते हैं। जैसे कि श्रीविष्णुचित्त सूरि ने गरुडारूढ़ श्री-लक्ष्मीनारायण भगवान् का दर्शन कर विस्मृत होकर प्रेमभाव में भगवान् भी रक्षा के लिये प्रार्थना की और उनका मंगलाशासन किया।

इस दिव्य प्रबन्ध में १२ गाथायें हैं। प्रारम्भ की दो गाथाओं के द्वारा सपरिकर भगवान् श्रीमन्नारायण की मंगलकामना स्वयं मुनिवर करते हैं। तीसरी, चौथी, पाँचवीं गाथाओं के द्वारा क्रमशः भगवत्प्राप्ति के इच्छुक, कैवल्यार्थी और ऐश्वर्यार्थी भक्तों को मंगलाशासन के लिये आह्वान करते हैं। बुलाये गये त्रिविध अधिकारियों की वाणी से सम्बद्ध छठी, सातवीं, आठवीं गाथाओं के द्वारा क्रमशः मंगलाशासन करते हैं। उन तीनों के साथ सम्मिलित होकर अपनी वाणी के साथ नवी, दशवीं और ग्यारहवीं गाथाओं के द्वारा मंगलाशासन करते हैं। बारहवीं गाथा में फलश्रुति का निर्देश है।

।। श्रीविष्णुचित्त मुनि विरचित तिरुप्पल्लाण्डु-मङ्गलाशासन कृति ।।

द्राविड गाथा

पल्लाण्डु पल्लाण्डु पल्लायिरत्ताण्डु, पलकोटि नूरायिरम् ।
मल्लाण्ड विण्डोल् मणिवण्णा !, उन्शेवडिशेव्वि तिरुक्काप्पु ।। १ ।।

अडियोमोडुम् निन्नोडुम् पिरिविन्नि आयिरम्पल्लाण्डु,
वडिवाय् निन्वलमार्पिनिल् वाल्हिन्नमङ्गैयुम् पल्लाण्डु ।
वडिवार् शोदि वलत्तुरैयुम् शुडरालियुम् पल्लाण्डु,
पडैपोर् पुक्कु मुलंमुम् अप्पाञ्जशन्नियमुम् पल्लाण्डे ।। २ ।।

वालाल्पट्टु निन्नीरुल्लीरेल् वन्दुमण्णुम्मणमुम् कोलभिन्,
कूलाल्पट्टु निन्नीर्हलैयेङ्गल् कुलुविनिल् पुहुदलोट्टोम् ।
एलाट् कालुम् पलिप्पिलोम् नाङ्गल् इराक्कदर्वाल्, इलङ्गै,
पालालाह प्पडैपोरुदानुक्कु प्पल्लाण्डु कुरूदुमे ।। ३ ।।

एडुनिलत्तिलिडुवदन्मुन्नम् वन्दु एङ्गल् कुलाम् पुहुन्दु,
कूडुमनमुडैयीर्हल् वरम्बोलि वन्दोल्लैक्कूडुमिनो ।
नाडुनगरमुम् नन्गरिय नमो नारायणाय वेन्नु,
पाडुमनमुडैप्पत्तरुल्लीर् वन्दु पल्लाण्डु कूरुमिने ।। ४ ।।

अण्डक्कुलत्तुक्कदिपतियाहि अशुररिराक्कदरै,
इण्डैक्कुलत्तै येडुत्तुक्कलैन्द इरुडीकेशन्तनक्कु ।
तोण्डुक्कुलत्तिलुल्लीर वन्दडितोलुदु आयिरनामम् शोल्लि,
पण्डैक्कुलत्तैत्तविर्न्दु पल्लाण्डु पल्लायिरत्ताण्डेन्मिने ।। ५ ।।

एन्दै तन्दैतन्दै तन्दै तम्मूत्तप्पन् एल्पडिकाल् तोडङ्गि,
वन्दु वलिवलियाट्चेय्हिन्नोम्, तिरुवोठात्तिरुविलविल् ।
अन्दियम्पोदिलरियुरुवाहि अरियैयलित्तवनै,
पन्दनैतीरप्पल्लाण्डु पल्लायिरत्ताण्देन्रू पाडुदुमे ।। ६ ।।

तीयिप्पोलिहिन्न शेन्जुडरालितिहल तिरुच्चक्करत्तिन्,
कोयिर्पोरियाले योत्तुण्डुनिन्रू कुडिकुडियाट्चेय्हिन्नोम् ।
मायप्पोरुपडै वाणनै आयिरन्दोलुम् पोलिकुरुदि,
पाय शुलत्तियवालिवल्लानुक्कु पल्लाण्डुकूरूदुमे ।। ७ ।।

नेय्यिडै नल्लदोर् शोरूम् नियदमुमत्ताणिच्चेवहमुम्,
कैयडैक्कायुम् कलुत्तुक्कुप्पूणोडु काडुक्कुण्डलमुम् ।
मेय्यिड नल्लदोर् शान्दमुम् तन्दु एन्नै वेल्लुयिराक्कवल्ल,
पैयुडै नाहप्पहैक्कोडियानुक्कु प्पलाण्डु कूरूवने ॥ ८ ॥

उडुत्तुक्कलैन्द निन् पीढकवाडै युडुत्त क्कलत्तदुण्डु,
लोडुत्ततुलाय्मलर् शूडिक्कलैन्दन शूडुमित्तोण्डर्हलोम् ।
विडुत्तातिशैक्करूमन्तिरुत्ति त्तिरूवोणात्तिरुविलविल्,
पडुत्तपैन्नाहणैप्पल्लिकोण्डानुक्कु पल्लाण्डु कुरूडुमे ॥ ९ ॥

एन्नालेम्बेरुमान् उन्तनक्कडियोमेन्नेलुत्तुप्पट्ट,
वन्नाले अडियोङ्गलडिक्कुडिल् वीडुपेत्तुय्न्ददुकाण् ।
शेन्नाल्तोत्तित्तिरुमदुरैयुल् शिलैकुनित्तु ऐन्दलैय,
पैन्नाहत्तलैप्पाय्न्दवने उन्नैप्पल्लाण्डु कुरूडुमे ॥१०॥

अल्वलक्कोन्रूभिल्ला अणिकोट्टियर्कोन् अबिमानतुङ्गन्,
शेल्वनैप्पोल तिरुमाले नानुमुनक्कुप्पलवडियेन् ।
नल्वहैयाल् नमो नारायणावेन्रू नामप्पल परवि,
पल्वहैयालुम् पवित्तिरने उन्नैप्पल्लाण्डु कुरूवने ॥११॥

पल्लाण्डेन्रू यवित्तिरनैप्परमेट्टियै शार्ङ्गमेन्नुम्,
विल्लाण्डान्तन्नै विल्लिपुत्तूर्विट्टुशित्तन् विरूम्बियशोल् ।
नल्लाण्डेन्रू नबिन्रूरैम्पार नमो नारायणायवेन्रू,
पल्लाण्डुम् परमात्मनै शूल्न्दिरुन्देत्तुवर् पल्लाण्डे ॥१२॥

॥ श्रीविष्णुमुनिविरचित तिरुप्पल्लाण्डु, मङ्गलाशासनकृति द्रविणगाथा समाप्त ॥

श्रीकाञ्ची प्रतिवादिभयङ्कर जगदाचार्य सिंहासनाधीश श्रीमदण्णङ्गराचार्यजी महाराज के द्वारा विरचित द्रविड गाथा का छाया रूप

संस्कृत रूपान्तर श्लोक

जय विजयी भव जय विजयी भव, जय जय शरदशशतशतमयुतम् ।
जय जय मल्लनिहन्तृभुजोज्ज्वल! मणिवर्ण! तवांघ्रिरुचिर्जयतात् ॥ १ ॥

स्वामिन् ! दासजनैस्सह स्थितिरियं जेजेतु ते शाश्वती,
बक्षःपीठविभूषिणी विजयतां पद्मा च ते प्रेयसी ।
जीयाद्दक्षिणपाणिमण्डनमणिः ज्योतिर्मयश्चक्रराट्,
जीयाद्युद्धमहीविसृत्वररवस्ते पाञ्चजन्योऽपि सः ॥ २ ॥
यद्युज्जीवनकाङ्क्षिणो भवथ तर्ह्यागम्यतां सादरं,
नैवान्नार्थिजनः कदाऽपि भजते गोष्ठयां प्रवेशं तु नः ।
अस्माकं निरवद्यता सुविदिता ह्यासप्त सन्तानतः,
लङ्काध्वंसविधायिनो रघुपतेशशास्महे मङ्गलम् ॥ ३ ॥
कैवल्याह्वयमुक्तिदेशगमनात्प्रागस्मदीयैस्समं,
संश्लेष्टुं यदि काङ्क्षथ स्वनियमं सन्त्यज्य गोस्त्वर्यताम् ।
श्रीनारायण मन्त्रराजभवनौ सर्वत्र गातुं रुचिः,
यद्यास्ते भवतां, समेत्य भगवद्भद्रावली गायत ॥ ४ ॥
अण्डौघाधिपतिं नमाम इति वा दैतेयरक्षोगण-
प्रध्वंसैकपटुं नमाम इति वा सङ्कीर्तयन्तोऽत्र भोः ।
अन्नार्थार्थिजनाः ! सहस्रमपितन्नामानि संकीर्त्य तत्-
पादाब्जे प्रणिपत्य गायत शुभं प्रच्याव्य पूर्वं कुलम् ॥ ५ ॥
मत्तातोऽथ पितामहोऽस्य जनकस्तत्तातमत्तातत-
ताता इत्यधिसप्तपर्वनियताः कैङ्कर्यसंपद्भराः ।
श्रोणायां दिवसावसानसमये भूत्वा नृसिंहात्मना,
शत्रुं क्षिप्तवते ह्यवद्यहतये भद्रावलीं ब्रूमहे ॥ ६ ॥
अत्यर्कानलदीप्रदीप्तिमहितश्रीचक्रलक्ष्माङ्किताः,
सन्तानक्रमशो वयं भगवतः कैङ्कर्यमादध्महे ।
मायासङ्गरदक्षबाणभुजसाहस्रं स्रवच्छोणितं,
कर्तुं हेतिपतिं नियोजितवते ह्याशास्महे मङ्गलम् ॥ ७ ॥
स्वाद्वन्नं धृतमेदुरं च नियतं कैङ्कर्यनिष्ठा तथा
ताम्बूलक्रमुकाभिवृद्धिमथ मे ग्रैवेयकं कुण्डलम् ।
पाटीरं रुचिरं प्रदाय कृपया शुद्धात्मकं मामिह
क्षिप्रं क्लृप्तवतश्शुभानि कथयै सर्पारिकेतोर्हरेः ॥ ८ ॥

धृत्वोत्सृष्टमनर्हापीतवसनं ते विभृतश्च त्वया
भुक्त्वोत्सृष्टमथोपभुज्य, तुलसीं शिष्टां दधाना वयम् ।
दासी दिक्षु यथानियोगमुचितं निर्वर्त्य कृत्वान्यथ -
श्रोणायां फणितल्पगस्य भवतो भद्रावलीं ब्रूमहे ।। ९ ।।

स्वामिन्नच्युत ! किङ्करा वयमिति न्यस्ताक्षरा यत्क्षणे,
जातास्स्मस्तव, सद्य एव समगात्संजीवनं सद्म नः ।
प्रादुर्भूय शुभे दिनेऽधिमथुरं निर्मूल्य चापाध्वरं
नृत्तं कालियमस्तके कृतवतस्ते ब्रूमहे मङ्गलम् ।।१०।।

दुर्नीतेरतिदूरगस्स हि यथा गोष्ठीश संयत्प्रभुः,
तद्वन्माधव ! सोऽहमप्यतिचिरादेवास्मि ते किङ्करः ।
श्रीनारायण ! ते नमोऽस्त्विति गृणन् भूयांसि नामानि ते,
क्रन्दन् सम्यगहो पवित्र ! भगवन् शंसामि ते मङ्गलम् ।।११।।

भद्राशासनवाग्भरेण परमस्थानेश्वरं पावनं
शार्ङ्गेशं प्रति धन्विनव्यनगरश्रीविष्णुचित्तोदितम् ।
सत्कालोऽयमिति प्रफुल्लमनसश्शंसन्ति ये ते हरिं,
श्रीनारायणमन्त्रतः परिमता नित्यं स्तुयुर्मङ्गलैः ।।१२।।

।। श्रीभट्टनाथयोगीन्द्रचरणावेव शरणम् ।।
।। श्रीरामानुज श्रीमद्वरवरमुनीन्द्राभ्यां नमो नमः ।।

इति श्रीकाञ्चीप्रतिवादिभयङ्कर अणङ्गराचार्य जी के द्वारा विलिखित मङ्गलाशासन दिव्य-प्रबन्ध की छायारूपी श्लोक कृति समाप्त हुई ।

- ☐ सत्य से प्रेम तो सभी करते हैं चाहे वे किसी धर्म जाति या देश के हों, परन्तु उसके पथ पर चलने का साहस विरले ही जुटा पाते हैं ।
- ☐ गलती तो हर मनुष्य कर सकता है, किन्तु उस पर द्रढ़ केवल मूर्ख ही होते हैं ।
- ☐ दूसरों की भलाई करो, मगर कहो मत ।

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र, वेदान्ताचार्य श्रीस्वामीवेदान्तदेशिकाचार्यजी से अनुगृहीत

यतिराज सप्तति

दयानिघ्नं यतीन्द्रस्य देशिकं पूर्णमाश्रये ।
येन विश्वसृजो विष्णोरपूर्यत मनोरथः ॥ ९ ॥

अन्वय—येन, विश्वसृजः, विष्णोः, मनोरथः, अपूर्यत, (तं), दयानिघ्नं यतीन्द्रस्य, देशिकं, पूर्णम्, आश्रये ।

अर्थ—इस श्लोक के द्वारा श्रीयामुनाचार्य स्वामी के शिष्य और श्रीभाष्यकार श्रीरामानुजाचार्य स्वामी जी के प्रथम आचार्य (गुरु) श्रीमहापूर्ण स्वामी जी को प्रणाम करते हैं ।

जिन श्रीमहापूर्ण स्वामी जी से सम्पूर्ण जगत् की सृष्टि करने वाले भगवान् श्रीविष्णु का मनोरथ पूर्ण हुआ—भगवान् ने सम्पूर्ण जीवों को जो अचित् के समान पड़े थे, शरीर—इन्द्रियाँ कृपा कर प्रदान कीं, जिससे ये जीव अपना आत्मकल्याण कर सकें, किन्तु ये जीव अपने वासना संस्कार के अनुसार पापकर्मों को ही करने लगे, तब भगवान ने श्रीरामानुज स्वामी जी को इस कार्य के लिये उपयुक्त समझा और श्रीमहापूर्ण स्वामी को आज्ञा दी कि तुम काञ्ची जाकर श्रीरामानुज को दीक्षित कर श्रीयामुनाचार्य के दिव्य ज्ञान से युक्त करो। श्रीमहापूर्ण स्वामी सपत्नीक काञ्ची के ओर प्रस्थित हुये । मधुरान्तक दिव्यदेश में दोनों की अकस्मात् भेंट हो गयी । श्रीरामानुज स्वामी को श्रीवरदराज भगवान् की आज्ञा हो चुकी थी कि तुम 'महापूर्ण स्वामी के समाश्रित हो जाओ ।' इस आज्ञा को उन्होंने श्रीकाञ्ची पूर्ण स्वामी जी से सुना और वे श्रीमहापूर्ण स्वामी से मधुरान्तक में पंचसंस्कार सम्पन्न हुये और श्रीयामुनाचार्य के महान् उपदेश भी प्राप्त किये तथा श्रीगोष्ठी पूर्ण आदिक चार अन्य आचार्यों से सम्पूर्ण ज्ञान पाकर श्रीरामानुजाचार्य सर्वज्ञ हुये । इस कार्य को करने से श्रीमहापूर्ण स्वामी जी ने भगवन्मनोरथ को पूर्ण किया ।

पूर्वोक्त प्रकार से भगवत्सङ्कल्प पूरा करने वाले श्रीमहापूर्ण स्वामी का मैं आश्रयण करता हूँ । वे (महापूर्ण स्वामी) यतीन्द्र श्रीरामानुजाचार्य स्वामी पर दया के परतन्त्र हैं अर्थात् दयावश वे श्रीरामानुज के हित में लग जाते हैं । क्योंकि वे दयालु हैं । इसीलिये श्रीरामानुज स्वामी को सर्वज्ञ पूर्ण बनाया । जिससे उनके भी वे आचार्य हैं अतएव महापूर्ण हैं । उनका मैं आश्रयण करता हूँ ।।९।।

प्रणामं लक्ष्मणमुनिः प्रतिगृह्णातु मामकम् ।
प्रसाधयति यत्सूक्तिः स्वाधीनपतिकां श्रुतिम् ॥ १० ॥

अन्वय—लक्ष्मणमुनिः, मामकम्, प्रणामं, प्रतिगृह्णातु । यत्सूक्तिः, स्वाधीनपतिकां, श्रुतिं, प्रसाधयति ।

अर्थ—प्रस्तुत श्लोक से श्रीवेदान्तदेशिक स्वामीजी श्रीमहापूर्ण स्वामी के शिष्य जगद्गुरु श्रीरामानुजाचार्य स्वामी जी को प्रणाम करते हैं, और कहते हैं—कि श्रीरामानुजस्वामीजी मेरा भाव,

कुभाव, जैसे तैसे भी किये गये प्रणाम को ग्रहण करें । मेरे पास और है भी क्या ? केवल प्रणाम है । श्रीरामानुजस्वामी हमारे महोपकारक हैं । जिनकी सुन्दर उक्ति ने पति को अपने आधीन रखने वाली श्रुति रूपा वधूको स्वाधीनपतिका सिद्ध किया । श्रुति=अर्थात् वेद या उपनिषद् हैं । श्रीरामानुजार्य स्वामी की श्रीसूक्ति रूपी सेविका श्रुतिवधू को सुशोभित करने वाली हैं । अलंकृत करती हैं । ऐसे श्रीरामानुजाचार्य स्वामी के श्रीचरणों में समर्पित प्रणाम को वे स्वीकार कर हम लोगों पर अनुग्रह करें ।। १० ।।

उपवीतिनमूर्ध्वपुण्ड्रवन्तं त्रिजगत्पुण्यफलं त्रिदण्डहस्तम् ।
शरणागतसार्थवाहमीडे शिखया शेखरिणं पतिं यतीनाम् ।।११।।

अन्वय—उपवीतिनम्, ऊर्ध्वपुण्ड्रवन्तं, त्रिजगत्पुण्यफलं, त्रिदण्डहस्तम्, शरणागतसार्थवाहं शिखया, शेखरिणम्, यतीनाम् पतिम्. ईडे ।

अर्थ - यज्ञोपवीत धारण करने वाले, द्वादश ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण किये हुये, तीनों लोकों के पुण्य के फलरूप, त्रिदण्ड धारण करने वाले, शिखा (चोटी) से शोभित और शरणागत जीवों के समूह के निर्वाहक, शिखा किरीट को धारण करने वाले एवं संन्यासियों के संरक्षक ऐसे श्रीरामानुजाचार्य स्वामी जी महाराज की मैं स्तुति करता हूँ । (श्रीवैष्णव संन्यासी यज्ञोपवीत, द्वादश-ऊर्ध्वपुण्ड्र, त्रिदण्ड एवं शिखा अवश्य धारण करते हैं)

प्रथयन् विमतेषु तीक्ष्णभावं प्रभुरस्मत्परिरक्षणे यतीन्द्रः ।
अपृथक्प्रतिपन्नयन्मयत्वैर्ववृधे पञ्चभिरायुधैर्मुरारेः ।।१२ ।।

अन्वयः—अपृथक्प्रतिपन्नयन्मयत्वैः, मुरारेः, पञ्चभिः आयुधैः, ववृधे, विमतेषु, तीक्ष्णभावं, प्रथयन्, यतीन्द्रः, अस्मत्परिरक्षणे, प्रभुः (अस्ति)

अर्थ—मुर नामके दैत्य के शत्रु श्रीभगवान् के पंच आयुध (सुदर्शन चक्र, शंख, शार्ङ्ग धनुष, कौमोदकी गदा, नन्दक खड्ग) मिलकर श्रीरामानुज स्वामी का दिव्यमंगलविग्रह ग्रहण किये हुये और अधिक रूपसे वर्धनशील हुये । प्रतिवादियों या नास्तिकोंके प्रति या उग्रभाव भयंकर प्रदर्शित करने वाले ऐसे यतिराज स्वामी श्रीरामानुजाचार्य, हम जैसे जीवों के रक्षण में समर्थ हैं अतएव वे हमारे स्तुति के पात्र हैं । हम श्रीरामानुजाचार्य की स्तुति करते हैं ।। १२ ।।

शमितोदयशङ्करादिगर्वः स्वबलादुद्धृतयादवप्रकाशः ।
अवरोपितवान् श्रुतेरपार्थान्ननु रामावरजः स एष (व) भूयः ।।१३।।

अन्वयः—रामावरजः, शमितोदयशङ्करादिगर्वः, स्वबलादुद्धृतयादवप्रकाशः, श्रुतेः, अपार्थान् अवरोपितवान्, सः, एषः, (रामावरजो) भूयः रामावरज , ननु (अवरोपितवान्) ।

अर्थ —अब श्रीभाष्यकार श्रीरामानुजाचार्य जी श्रीकृष्ण ही हैं अतएव उनकी स्तुति श्रीकृष्ण भगवान् की स्तुति ही है । यही इस श्लोक द्वारा वर्णित है ।

बलराम जी के अवरजः=छोटे भाई होने से श्रीकृष्ण और श्रीरामानुजाचार्य स्वामी, रामानुज इस नाम से प्रसिद्ध ही हैं । दोनों का एक नाम है । अब दोनों का कर्म भी एक है, यह बताते हैं । प्रथम श्रीकृष्ण परक अर्थ को देखें—अपने बल से जिन्होंने (श्रीकृष्ण ने) बाणासुर युद्ध के समय शंकर, कार्तिकेय, गजानन आदि का, गोवर्धन धारण लीला प्रसङ्ग में देवराज इन्द्र का, ग्वालबाल बछेड़े चुराने के प्रसंग में ब्रह्मा जी का गर्व हरण किया था अतएव श्रीकृष्ण में 'स्वबलाच्छमितोदयशङ्करादिगर्वः'

घटता है । श्रीरामानुज स्वामी जी ने भी अपने बुद्धिबल से श्रीउदयनाचार्य, श्रीशङ्कराचार्य, श्रीभास्कराचार्य आदिकों के गर्व शान्त किये अर्थात् खण्डन किये । और अपनी भुजाओं के बल से ही (श्रीकृष्ण ने) यादवों का (जो श्रीकृष्ण अवतार से कंस से डरकर भयभीत जहाँ तहाँ छिपे हुये प्रकाश हीन थे अथवा जो यादव कंस के शासन में रह कर प्रकाश हीन थे उन यादवों को श्रीकृष्ण ने अपने बाहुबल से मार कर यादवों को प्रकाशयुक्त किया । श्रीरामानुजार्य ने अपनी बुद्धिबल से यादवप्रकाशाचार्य के द्वारा 'कप्यासं पुण्डरीकमेवमक्षिणी' इस श्रुतिवाक्य का अर्थ खण्डित कर अपने अर्थ को सर्वग्राह्य प्रकट कर उनके गर्व को मूल से उखाड़ फेंका । अथवा श्रीरामानुज स्वामी जी ने अपने प्रभाव से यादवप्रकाशाचार्य को शिष्य बनाकर उनका उद्धार किया । इस प्रकार दोनों की कार्य समता सिद्ध होती है ।

श्रीकृष्ण भगवान ने पार्थ=अर्जुन, अ—पार्थ=अर्जुन विरोधी दुर्योधन आदिकों को या अप—अर्थ ऐसा खण्ड करने से 'गलत अर्थ' ऐसा अर्थ होता है । श्रीकृष्ण ने पाण्डव विरोधियों का नाश कर दिया या नाम तक मिटा दिया या उनका कोई नाम तक सुनना नहीं चाहता था अतएव श्रुति= कान से उतार दिया । द्रोपदी के प्रति महान् अपराध करने से दुर्योधन आदि को मार डाला । सामर्थ्यवान् होकर भी शिर नीचा किये चुप बैठने के कारण भीष्म पितामह आदिकों को दीनता पूर्वक मरना पड़ा ।

श्रीरामानुजार्यस्वामी के पक्ष में श्रुति=वेद के अपार्थान्=गलत अर्थों को उतार दिया । जैसे यादवप्रकाश ने 'कप्यासं पुण्डरीकमेवमक्षिणी' श्रुति के गलत अर्थ का खण्डन कर सुयोग्य अर्थ का प्रतिपादन किया । इस प्रकार तीनों विशेषण श्रीकृष्ण और श्रीभाष्यकार रामानुजाचार्य में घटित होने से श्रीरामानुजाचार्य स्वामी श्रीकृष्ण के अवतार ही हैं । इसलिये उनकी स्तुति करना युक्तियुक्त और उपयुक्त भी है ॥१३॥

अबहुश्रुतसंभवं श्रुतीनां, जरतीनामयथायथप्रचारम् ।
विनिवर्तयितुं यतीश्वरोक्तिः, विदधे ताः स्थिरनीतिपञ्जरस्थाः ॥ १४ ॥

अन्वय=यतीश्वरोक्तिः, जरतीनाम्, श्रुतीनां अबहुश्रुतसंभवं, अयथायथप्रचारम्, विनिवर्तयितुं, ताः, स्थिरनीतिपञ्जरस्थाः, विदधे ।

अर्थ—यहाँ इस श्लोक में पक्षी का दृष्टान्त छिपा है । शुक—सारिका वन में स्वेच्छा से संचार करते हैं । अल्पज्ञ बालक उन पक्षियों को पकड़ अपने ढंग से इधर उधर खीचातानी करते हैं तो उनके अंग जीर्ण शीर्ण हो जाते हैं जिससे वे उड़ने में असमर्थ हो कष्ट पाते हैं तब दयालु राजा की दृष्टि पड़ने पर राजा अपनी कन्या को आज्ञा देता है कि लोहे का मजवूत पिंजडा बनवाया जाय जिसमें उँगुली तक न जा सके ऐसे पिंजड़े में इन पक्षियों को रखकर पाला जाय ।

जैसे अल्पज्ञ अद्वैतियों द्वारा श्रुतियों का अर्थ अयथार्थ रूप में वर्णन करने से दयावान् श्रीभाष्यकार रामानुजस्वामी ने अपनी सूक्तियों से ऐसे सुदृढ़ पिंजड़े का निर्माण किया और उसमें जीर्ण शीर्ण श्रुतियों को स्थापित कर रक्षा की । श्रुतियों का गलत अर्थ करने से होने वाला भ्रम सम्पूर्ण वेदार्थों में फैल गया । पक्षि पक्ष में—पक्षी ठीक ठाक चल, उड़ नहीं पाते थे । इस स्थिति को विशेष रूप से हटाने के लिये श्रीरामानुजाचार्य की सूक्ति, स्त्री रूप से वर्णित श्रुतियों का क्लेश विशेष रूप से

हटाने में समर्थ हुई। यहाँ पर स्त्री ही स्त्रियों के रोग को दूर करने में विशेष रूप से समर्थ होती है, यह बताया।

यतीन्द्र, श्रीरामानुजार्य की सूक्ति ने भेदश्रुति और अभेद श्रुतियों के परस्पर विरुद्धार्थ को यथार्थ अर्थ का वर्णन करके मिटाया। स्थिरनीति रूपी पिंजड़े में उन श्रुतियों को स्थापित किया जिससे विरोध परिहारपूर्वक अद्वैतियों के द्वारा श्रुतियों का आन्तर क्लेश दूर हुआ। श्रीभाष्यकार की सूक्ति का वर्णन किया गया ॥१४॥

अमुना तापनातिशायिभूम्ना यतिराजेन निबद्धनायकश्रीः।
महती गुरुपंक्तिहारयष्टिः बिबुधानां हृदयंगमा विभाति ॥ १५ ॥

अन्वय—तपनातिशायिभूम्ना, अमुना, यतिराजेन, निबद्धनायकश्रीः, महती, गुरुपंक्तिहार-यष्टिः, विबुधानां, हृदयंगमा, विभाति।

अर्थ—तपन अर्थात् सूर्य, अतिशायिभूम्ना=अन्यग्रहों से विशेष प्रभा युक्त होता है, श्रीभाष्यकार रामानुजाचार्य स्वामी अन्य आचार्यों से अधिक प्रभाव सम्पन्न हैं, अतः सूर्य के समान हैं। अतः आचार्यपरम्परा में श्रीरामानुजस्वामी नायक रत्न के समान हैं। मध्यम मणि के सदृश हैं।

दूसरा भाव है कि श्रीरामानुज स्वामी जी सूर्य से अधिक प्रभावशाली हैं। सूर्य बाहरी अन्धकार को हटाते हैं। श्रीरामानुजस्वामी भीतरी अज्ञानरूपी अन्धकार को दूर हटाते हैं अतः सूर्य से बढ़कर हैं। लेकिन सूर्य के समान उग्रता नहीं है। वे तो जगत को आह्लादित करने वाले हैं। वे 'यतिराज' हैं, यतियों के राजा अर्थात् चन्द्रमा के समान वे यतिराज हैं।

अमुना=ये श्रीरामानुज स्वामी, (संन्निकृष्ट लगातार स्मरण से वह वस्तु प्रत्यक्ष दीखने लगती हैं) हार के बीच में बड़े रत्न के समान हैं जिससे उस हार की शोभा संवर्धित होती है। इसी प्रकार इनके गुरुपरम्परा में मध्यवर्ती होने से उन आचार्यों की शोभा ही संवर्धित होती है। अतः गुरु-परम्परा विद्वानों से समादृत होने से महिमामण्डित होगी।

अलूनपक्षस्य यतिक्ष्माभृतो विभाति वंशे हरितत्वमक्षतम्।
यदुद्भवाः शुद्धसुवृत्तशीतलाः भवन्ति मुक्तावलिभूषणं भुवः ॥ १६ ॥

अन्वय—अलूनपक्षस्य, यतिक्षमाभृतः, वंशे, हरितत्वम्, अक्षतम्, विभाति, यदुद्भवाः, शुद्ध-सुवृत्तशीतलाः, भुवः, मुक्तावलिभूषणं, भवन्ति।

अर्थ—इस श्लोक में श्लेषालंकार का चमत्कार द्रष्टव्य है। पक्ष, क्षमाभृत्, वंश, हरितत्व, सुवृत्त, मुक्त ये दो दो अर्थ वाले हैं। पक्ष=वादियों के पक्ष या पक्षियों के पंख, क्षमाभृत=राजा या पर्वत, वंश=पुत्रपौत्र का वंश, शिष्य प्रशिष्य आदि विद्यासंतति या बाँस, हरितत्व=हरापन या हरि का स्वरूप हरि का अर्थ सिंह, वानर आदि भी अर्थ होते हैं। सुवृत्त=अच्छे आचरण वाला मनुष्य, या गोल आकार वाला, मुक्त=मुक्त जीव या मोती।

जिसके पक्ष (पंख) नहीं काटे गये हैं ऐसे श्रेष्ठ पर्वत के समान श्रीरामानुज स्वामी जी हैं। यतियों में क्षमाभृत=श्रेष्ठ यतिराज हैं। जिनका पक्ष न काटा गया हो। श्रीरामानुज स्वामी जी का पक्ष भी किसी प्रतिवादी के द्वारा खण्डित नहीं हो सका। अकाटच पक्ष वाले श्रीस्वामी जी अखण्डित पक्ष वाले पर्वत की तरह सर्वदा अटल विराजित हैं।

अखण्डित पक्षवाले पर्वत के वंश अर्थात् बांस में हरितत्व अर्थात् हरापन अक्षत रहेगा तथा चमकता रहेगा। श्रीस्वामीजी के वंश में अर्थात् शिष्य प्रशिष्य आदिक विद्या सन्तति में हरितत्व अर्थात् भगवत्तत्व अक्षत नित्यवास करते हैं। भगवान का स्वरूप और स्वभाव श्रीसम्प्रदाय में ही यथावस्थित रूप से देदीप्यमान है। दूसरे सम्प्रदाय वाले कहते हैं कि भगवान अविद्या दोष से ग्रस्त निर्गुण हैं।

हरे वांसों से मोती निकलते हैं यह प्रसिद्धि है। पर्वतीय वांसों से उत्पन्न मोती शुद्ध होते हैं, गोल आकार बाले होते हैं, शीतल होते हैं वे भूदेवी के वक्षःस्थल के शोभासंवर्धक होते हैं। इसी प्रकार श्रीरामानुज स्वामीजी के श्रीसम्प्रदाय में जो श्रीवैष्णव होते हैं वे भी शुद्ध होते हैं, उनमें भ्रम, पापाचरण आदि दोष नहीं होते हैं। उनमें सच्चरित्र, सत्कर्मानुष्ठान वाले, दयालु, वे भूमि के भूषण होते हैं। 'भुवः' को पञ्चम्यन्त मानने पर अर्थ होगा कि उक्त प्रकार के श्रीवैष्णव वैकुण्ठ में पहुँचकर मुक्त जीवों के अलंकार बन जाते हैं। यह महत्व अन्य लोगों को नहीं मिलता है इस प्रकार अनुकूल श्रीवैष्णवों को उज्जीवित करने वाले, प्रतिकूल वादियों को जीतने वाले, कवितार्किकसिंह श्रीदेशिक स्वामी जी के रहते श्रीरामानुजस्वामी का पक्ष कैसे खण्डित हो सकता है ? ॥ १६ ॥

—क्रमशः

आचारः प्रथमो धर्मः

'आचारप्रभवो धर्मः' (महाभारत अनु० पर्व १४९।३७)

यस्मिन् देशे य आचारः पारम्पर्यक्रमागतः।
वर्णानां सान्तरालानां स सदाचार उच्यते ॥ (मनु० २।१८)

सरस्वती और दृषद्वती का अन्तराल (मध्यभाग) यह देवाधिष्ठित तथा ब्रह्मावर्त कहलाया। यहाँ तथा आर्यावर्त्त में पैदा होने वाले लोगों का अन्तःकरण पवित्र नदियों का जल पीने से प्राचीन पितृ पितामह प्रपितामहादि द्वारा अनुष्ठित आचारों की ओर ही उन्मुख होता है।

धर्मोऽस्य मूलं धनमस्य शाखाः पुष्पं च कामः फलमस्य मोक्षः ॥ (वाम०पु० १३)

धर्म ही इसका मूल, धन शाखा है, काम पुष्प और मोक्ष ही फल है। ब्राह्ममुहूर्त में उठना, भगवच्चिन्तन करना, पृथ्वी स्पर्श—'समुद्रवसने' शौच जाना, मिट्टी से शुद्धि करना, दन्त धावन, स्नान, सन्ध्योपासन, सूर्यार्घ्य, चार आश्रम हैं। ब्राह्मणों के लिये ही विहित हैं। क्षत्रिय को संन्यास नहीं, वैश्य को ब्रह्मचर्य गार्हस्थ्य दो ही आश्रम, शूद्र को गार्हस्थ्य ही है।

धर्मो जयति नाधर्मः सत्यं जयति नानृतम्।
क्षमा जयति न क्रोधः क्षमावान् ब्राह्मणो भवेत् ॥

(महा० आश्वमेधिकपर्व)

गोभक्ति सेवा, कपिला गौ अग्नि से उत्पन्न, प्रातः काल कपिला के मूत्र से स्नान तीस वर्षों के पाप नष्ट करता है।

जन्माष्टमी

रचयिता—कविवर राजेश दीक्षित, मथुरा

हे कृष्ण !
हम तुम्हें पिछली पाँच सहस्र वर्षों से
पूजते चले आ रहे हैं !
हे वसुदेव - नन्दन !
हमने तुम्हारे सैकड़ों मन्दिर बनवाये,
पूजा और उपासना की
अनेक पद्धतियाँ प्रचलित कीं;
'वल्लभकुल', 'राधा वल्लभ' आदि
अनेक सम्प्रदाय खड़े किए,
और तो और
'सखी - सम्प्रदाय' की स्थापना में भी
नहीं चूके:,
उत्थापन, आरती, शयन आदि झाँकियाँ,
छप्पन-भोग की सामग्रियाँ;
शृङ्गार—सज्जा विभिन्न प्रणालियाँ;
तिलक - छापों के आकार - प्रकार,
गायन - कीर्तन; ध्रुपद और धमार;
रास लीलाओं में—
'ताताथेई' की ध्वनियाँ,
स्वरों के उतार - चढ़ाव;
इन सबके आविष्कार,
विकास, संशोधन, प्रचार और प्रसार में
हे मनमोहन !
हम पिछली पाँच सहस्र वर्षों से
जूझते चले आ रहे हैं !

× × ×

हे नाम-रूपातीत !
तुम्हारे इतने अधिक नाम - रूप हैं,
जिनकी गिनती ही नहीं हो सकती,
फिर भी,
हम तुम्हें केवल
कुन्जबिहारी, नटवर-नागर, गोपीबल्लभ,
रसिक-शिरोमणि, रास-रचैया, चीर-हरैया,
राधाकान्त
और यहाँ तक कि
'किशोरी-रमण' आदि नामों से पुकारना ही
अधिक पसन्द करते हैं !
'जयदेव' से लेकर 'बिहारीलाल' तक नें
तुम्हारे त्रिभंगी रूप की प्रशंसा में ही
अपनी लेखनी की सार्थकता समझी है;
इन सबने उन गोपनीय काम-क्रीड़ाओं
तक का वर्णन करने में
कोई संकोच नहीं किया,
जिन्हें सामान्यत: कहने में
होठ काँपने लगते हैं,
जीभ लड़खड़ा जाती है !
और, आज भी–
तुम्हारी प्यारी ब्रजबानी में प्राय:
'प्रियाजू' और 'प्यारेजू'
की रीति - लीलाओं के अतिरिक्त
अन्य कुछ पढ़ने - सुनने को नहीं मिलता;
"तो क्या तुम्हारा वह षोडशकलावतार
केवल यही सब करने के लिए हुआ था ?
अथवा कि हमीं
अपनी दुर्वासनाओं की तुष्टि हेतु
तुम्हारे नाम का आडम्बर ओढ़े हुए हैं ?"

हे लीलामय !
वासना के इस लहराते असीम - सिन्धु
के तट पर खड़े
हतप्रभ से विचारकगण
इस प्रश्न का उत्तर
पिछली पाँच सहस्र वर्षों से ढूंढते चले आ रहे हैं !

× × ×

हे योगीश्वर !
हमने सुना है कि—
तुमने साढ़े ग्यारह वर्ष की आयु में ही
दुष्ट कंस को मार गिराया था;
और—
तेरह वर्ष की छोटी-सी आयु में ही
ब्रजमण्डल को छोड़ कर
द्वारकापुरी चले गए थे;
और—
जब तुमने रास - क्रीड़ाएँ की थीं,
तब तुम्हारी आयु
केवल नौ-दस वर्ष की रही होगी;
तुम्हारी बाल-लीलाओं को पढ़ - सुन कर
हम आनन्दित होते रहें—
इसे ठीक माना जा सकता है,
परन्तु—
'उनके नाम पर
हम बूढ़े और जवान,
आज के वैज्ञानिक - युग में जन्मे इन्सान,
अपनी विकृत यौन - भावनाओं का
यत्र - तत्र नग्न - प्रदर्शन करते फिरें—
यह कहाँ तक उचित है ?
'तुम्हारे पावन - मन्दिर
हमारे अपावन - कृत्यों के
संरक्षक बनें'—
यह कहाँ तक उचित है ?
'तुम्हारे नाम पर हम
लुटते और लूटते रहें,
ठगते और ठगाते रहें—
यह कहाँ तक उचित है ?
क्या तुम—
'अपने व्यवसायी - सेवकों के लिए
भक्ति के क्रय - विक्रय का
बाजार खोल गए हो,
जिसके वे पुश्तैनी स्वामी बने बैठे हैं,
धर्म-धुरन्धर का ढोंग रचे बैठे हैं ?'
हे कालिय - मर्दन !
इन विसंगतियों की पहेली का अर्थ
हम पिछली पाँच सहस्र वर्षों से
बूझते चले आ रहे हैं !

× × ×

हे कर्मयोगिन् !
तुमने हमें नाचने - गाने का नहीं,
गीता का पाठ पढ़ाया था,
परन्तु उसमें हमारा मन नहीं लगता !
तुमने हमें लूटने - खसोटने का नहीं,
त्याग का उपदेश सुनाया था,
परन्तु वह हमें नहीं सुहाता !
तुमने हमें
जीवन और मृत्यु के यथार्थ का बोध देकर,
अन्याय और शोषण के
प्रतिकार का मार्ग दिखाया था,
परन्तु हम उस पर नहीं चलते !
हम तुम्हारे बाल - रूप को,
गोद में उठाये घूम रहे हैं,
रसिक - शिरोमणि रूप को
हृदय से लगा कर घूम रहे हैं,
परन्तु विराट् रूप के सम्बन्ध में नहीं सोचते,
हम तुम्हारी नन्हीं सी मुरली
की धुन में मस्त हो रहे हैं,
परन्तु पाञ्चजन्य के स्वर को नहीं सुनते,
तुम्हारे माखन को चुराकर खाये जा रहे हैं,
परन्तु सुदर्शनचक्र की ओर नहीं देखते,
यह सब क्या हो रहा है ?
हे यशोवर्द्धन !

शायद पिछली पाँच सहस्र वर्षों से हम स्वयं को
छलते चले आ रहे हैं !

× × ×

हे जगदात्मन् !
आज तुम्हारा जन्म - दिवस
फिर आया है,
हम उसे प्रसन्नता में भर कर मना रहे हैं,
और दूसरी ओर—
तुम्हारे ही भक्त, तुम्हारे ही अवतार,
श्री श्री चैतन्य महाप्रभु,
निमाई - निताई की धरती के लोग
खून के आँसू बहा रहे हैं,
और केवल वे ही क्यों ?
सच पूछा जाय—
तो हम सब उस श्वान की भाँति
भ्रम में डूबे हैं
जो सूखी - हड्डी चबाने के कारण
अपने ही मुँह से निकलने वाले
रक्त को पी कर,
उसे पराया - रक्त समझता हुआ
आनन्दित होता रहता है !
कैसी है यह विडम्बना ?
कैसा है यह आत्मघात ?
हे महाप्रभु !
आज तुम अपने इस जन्म - दिवस पर,
जन्माष्टमी के पुण्य - पर्व पर,
हमारी आँखों पर पड़े
भ्रम के पर्दे को हटा देने की कृपा करो !
हमें एक अवसर दो कि—
हम तुम्हारे यथार्थ - स्वरूप को पहिचानें,
उससे प्रेरणा लें, उसका अनुगमन करें,
कर्मयोगी बन, आत्माहुति से विरत हों,
अन्यायों के प्रतिकार हेतु
सौ - सौ महाभारतों के आयोजन करें
शिशुपालों के मस्तक काटें,
जरासंधों की टाँगें छाटें,
कंसों का कलेजा बाहर निकाल लें,
और,
सदा - सदा के लिए
वंश-विध्वंस करदें उन नर-पशुओं का,
जो मानवता का रक्त चूसते हैं,
फिर भी मदमस्त बने घूमते हैं !
हे भगवन् !
आज हमें तुम्हारी बाल - लीलाओं की नहीं,
युवावस्था के चरित्रों की आवश्यकता है !
द्रौपदियों की लाज बचाने से लेकर
कौरव - कुल के संहार तक महत्कार्य
समुपस्थित है,
आज हमें 'बाँसुरी' नहीं,
अपनी 'कौमोदकी' गदा दो,
'शार्ङ्ग' धनुष दो,
'सुदर्शन' चक्र दो,
और दो वह 'पाँचजन्य' शंख,
जिसकी ध्वनि सुन कर—
सम्पूर्ण राष्ट्र एक स्थान पर आ खड़ा हो—
अन्याय के, पशुता के, दरिद्रता के,
अत्याचारों की विभीषिका के
विरुद्ध संघर्ष करने को एक जुट होकर !
हमारी जय हो,
हम कौरवों पर विजय प्राप्त करें,
हम आतताइयों का वंशोन्मूलन करें !
फिर बाद में भले ही
हिंसा के पाप - प्रक्षालन हेतु
आध्यात्मिक – मुक्ति के संवरण हेतु
हिमालय की ही शरण क्यों न लेनी पड़े !
हे प्रभु !
जब ऐसा होगा,
तभी यह विश्व जानेगा कि—
'हमने इतने वर्षों बाद, पहली बार,
सच्चे अर्थों में तुम्हारा जन्म–दिन मनाया है।'
हम पिछली पाँच सहस्र वर्षों से
तुम्हें पूजते चले आ रहे हैं ! □

पितृश्राद्ध विषयक वेदवाणी

ले०—आचार्य श्रीगुरुचरण मिश्र
प्राप्त स्वर्णपदकत्रय, व्या० सा० आचार्यषट् शास्त्री
शङ्करपुर, नासरीगंज, रोहतास (बिहार)

*

अब पितृयान मार्ग कहते हैं।

मन्त्र—अथ य इमे ग्रामइष्टापूर्ते वत्तमित्युपासते, ते धूममभिसंभवन्ति। धूमाद्रात्रिम्, रात्रेरपरपक्षम्, अपरपक्षात् यान्षड्दक्षिणेति मासास्तन्नेते सवत्सरमभिप्राप्नुवन्ति॥
(छ० उ० प्र० ५ ख० शु० ३)

पितृयान मार्ग में जो लोग ग्राम में रहते हुए ज्योतिष्टोमादि यज्ञ तथा कूप तडाग आदि दान उपवास इत्यादि कर्म श्रद्धा से करते हैं, वे धूम अभिमानी देवता को प्राप्त होते हैं। वहाँ रात्रि अभिमानी देवता को, वहाँ से कृष्णपक्षाभिमानी देवता को, वहाँ से दक्षिणायनाभिमानी देवता को, प्राप्त होते हैं। ये वर्ष अभिमानी देवता को नहीं प्राप्त होते हैं।

धूमोरात्रिस्तथा कृष्णः षण्मासा दक्षिणायनम्। तत्र चान्द्रमसीं ज्योतिर्योगी प्राप्यनिवर्त्तते।
(गी० ८।२५)

धूम, रात्रि, कृष्णपक्ष और दक्षिणायन में गया हुआ योगी चन्द्रसम्बन्धी ज्योति पाकर पुनः लौट जाता है।

मन्त्र—मासेभ्यः पितृलोकम्, पितृलोकादाकाशम्, आकाशाच्चन्द्रमसम्, एष सोमो राजा। तद् देवतानामन्त्रम्॥
(छा०उ०प्रपा–५ ख० १० शु० ४)

दक्षिणायन के अभिमानी देवताओं से पितृलोक प्राप्त होते हैं। पितृलोक से आकाश को प्राप्त होते हैं। आकाश से चन्द्रमा को प्राप्त होते हैं। वह चन्द्रमा को प्राप्त करने वाला इष्ट आदि का कर्त्ता सोम के समान देदीप्यमान स्वर्ग सुख भोग करने योग्य देह वाला हो जाता है। वह देवताओं के अन्न के समान उनका उपकरण हो जाता है।

तृतीया ह प्रद्यौरिति, यस्यां पितर आसते। (अथर्ववेद का० १८ सू० ५ म० ४८)

ऊपर अन्तरिक्ष का तीसरा भाग सूर्यादि की किरणों से प्रखर प्रकाश वाला होनें से प्रद्यो कहा जाता है। यहाँ पितरों का लोक है, वहाँ पितर रहते हैं।

मन्त्र—ये के चास्माल्लोकात्प्रयान्ति चन्द्रमसमेव ते सर्वे गच्छन्ति।
(कौषितकी उप० अ० १ श्रु० २)

जो कोई अग्निहोत्रादि सत्कर्मों को करने वाले हैं, वे इस लोक से प्रयाण करके चन्द्रमा को ही प्राप्त करते हैं।

मन्त्र—अथैनं पितरः प्राचीनावीतिनः सव्यं जान्वाच्योपासीदं स्तानब्रवीन् मासि-मासि वोऽशनं वो मनोजवश्चन्द्रमा वो ज्योतिः। (शतपथ ब्रा० २४–२–३)

पितर अपसव्य होकर बाये जांघ को झुकाकर बैठे हुए प्रजापति कहे हैं कि महीने-महीने यज्ञ तुम्हारा स्वधायुक्त भोजन का अन्न मन के समान वेग और चन्द्रमा के समान ज्योति होगी ।

मन्त्र—पूर्वाह्णो वै देवानाम्, मध्यन्दिनो मनुष्याणामपराह्णः पितृणाम् ।
(शतपथ ब्रा० २-४-२८-२)

पूर्वाह्ण देवताओं का, मध्यदिन मनुष्यों का, और अपराह्ण (तीसरा प्रहर) पितरों के भोजन का समय है ।

मन्त्र—तिरइव पितरो मनुष्येभ्यः । (श० पथ ब्रा० २-३-४-२)

मनुष्यों से पितर अन्तर्हित (छिपे) रहते हैं ।

मन्त्र—ये शतं देवगन्धर्वाणामानन्दाः स एकः पितृणां चिरलोकानामानन्दः । (तै० वा० २ अनु० ८)

जो देव गन्धर्वों के सैकड़ों आनन्द हैं, वह चिरलोकवासी पितरों का एक आनन्द है ।

मन्त्र—ये निखाता ये परोप्ता ये दग्धा ये चोद्धिता, सर्वांस्तानग्न आवह पितॄन् हविषे जन्तवे ।
(अथर्ववेद का० १८ सू० २ म० ३४)

जो गाड़े गये, जो जल में छोड़ दिये गये, जो जला दिये गये और जो स्वर्ग में चले गये हैं, हे अग्निदेव! उन सबको हविष (पिण्ड) भोजन करने के लिये पितृकर्म में बुलाओ ।

यक्षरक्षः पिशाचानां गन्धर्वाप्सरसोऽसुरान् । नागान् सर्वान् सुपर्णांश्च पितॄणां च पृथग्गणान् ।
(म० स्मृ० १।३७)

यक्ष, राक्षस, पिशाच, गन्धर्व, अप्सरा, असुर, नाग सर्प, गरुड और पितृगण को भी पृथक्-पृथक् उत्पन्न किये ।

श्रुति—मासेभ्यः पितृलोकम्, पितृलोकाच्चन्द्रम्, प्राप्यान्नं भवति ।
तान् तत्र देवाः यथा सोयं राजानमाप्यायस्वापक्षीयस्वेत्येवमेनांस्तत्र भक्षयन्ति ॥
(बृ०आ०उ०अ० ६ ब्रा० २ श्रु० १६)

दक्षिणायन के छः मासों के देवतओं से पितृलोक को, वहाँ से चन्द्रमा को प्राप्त होते हैं । चन्द्र को पाकर वे अन्न हो जाते हैं जिनको देवता लोग अपनी सेवा में लाते हैं ।

[ऋग्वेद (अध्याय ६ वल्ली १४) (मण्डल १० अनुवाक १सू० १४ यमराज पितृपति हैं प्रमाण—]

मन्त्र—परेयिवांसं प्रयतो महीरनु बहुभ्यः पन्थामनुपस्पशानम् ।
वैवस्वतं संगमनं जनानां यमं राजानं हविषा दुवस्य ॥१॥

जीव (यजमान) अपनी अन्तरात्मा को सम्बोधित कर कह रहा है । तू पितरों के स्वामी यमराज का हविष् (पुरोडाश या पिण्ड) से सेवा करो । जो भूलोक में होने वाले विविध भोगों को प्राप्त करने का साधन पुण्य है, उसके अनुष्ठान करने वाले जनों का भूप्रदेश (इस लोक) में भोग सामग्रियों को भोगने के बाद मरने के बाद क्रमशः सुख सामग्रियों को प्राप्त कराते हैं और बहुत पुण्य जनों के लिये पुण्य के फलों को भोगने के लिये स्वर्ग के उचित मार्ग को निर्बाध रूप से प्रदान करते हैं और पापीजनों को स्वर्ग मार्ग के बाधक नरक में भेजते हैं । परन्तु पुण्य कर्ताओं को नरक में नहीं भेजते हैं । सूर्य के पुत्र यमराज पापीजनों का गन्तव्य स्थान है ॥१॥

मन्त्र—यमो नो गातुं प्रथमो विवेद नैषागव्युतिरपभर्त्तवा उ ।
यत्र नः पूर्वे पितरः परेयु रेनाजज्ञानाः पथ्या अनुस्वाः ॥२॥

सभी जनों का प्रथम (मुख्य) यम है । वह हम प्रजाओं के शुभ अशुभ कर्मों को जानता है अर्थात् यम का ज्ञान अतिशय एवं सर्वोपरि है ।

इस कारण कोई इसका अपनयन (अपवारण) नहीं कर सकता है। जिस मार्ग से हमारे पूर्व पितर गये हैं, उसी मार्ग से सब जाते हैं। हमारे जो अपने आत्मीय प्राणी हैं, वे भी अपने कर्मों के अनुसार एक के पीछे दूसरे जाते हैं।

ऋक्—मातली कव्यैर्यमो अंगिरोभिः बृहस्पति ऋक्वभिर्वावृधानः।
यांश्च देवावावृधुर्ये च देवान्त्स्वाहान्ये स्वधयान्ये मदन्ति ॥३॥

मातलि इन्द्र का सारथि है,मातलि का स्वामी इन्द्र है,अतः वह इन्द्र मातलि कहा जाता है वह (इन्द्र) कव्यभाग को ग्रहण करने वाले पितरों के साथ अतिशय रूप से बढ़ते हैं, और एक प्रकार के विशेष पितर हैं, जो अङ्गिरा कहे जाते हैं। उनके साथ यम अतिशय रूप से बढ़ते हैं। वहाँ इन्द्र आदि देव कव्यभाग को ग्रहण करने वाले पितरों को बढ़ाते हैं, और जो कव्यभाग के ग्राही पितर हैं, वे इन्द्र आदि देवों को बढ़ाते हैं। उनके मध्य जो अन्य इन्द्र आदि देव हैं, वे स्वाहाकार (स्वाहा शब्द के उच्चारण से) हर्षित होते हैं, और अन्य पितर स्वधाकार (स्वधा शब्द के उच्चारण) से हर्षित होते हैं ॥ ३ ॥

ऋक्—इमं यम प्रस्तर मा हि सीदां गिरोभिः पितृभिः संविदानः।
आत्वा मन्त्राः कविशस्ता वहन्त्वेना राजन् हविषा मादयस्व ॥४॥

हे यम आप अंगिरा नामक पितरों के साथ एक मत होकर इस विस्तृत यज्ञ विशेष (विविध) यज्ञों में आकर बैठिये। उपस्थित होइये। कारण कि इस प्रकार से कवियों (ऋत्विजों) से प्रयुक्त (प्रयोग किये हुए) मन्त्र आपका आह्वान करें। हे राजन्! इन मन्त्रों और हविषों (पिण्डों) से आप यजमान को हर्षित करें ॥४॥

मन्त्र--अंगिरोभिरागहि यज्ञियेभिर्यमं वैरूपैरिह मादयस्व।
विवस्वन्तं हुवे यः पिता ते अस्मिन् यज्ञे बर्हिष्या निषध ॥५॥

हे यम विविध रूपों में युक्त और सामगान के प्रिय यज्ञ में भाग लेने योग्य अंगिरा नामक पितरों के साथ आइये। यहाँ आकर इस यज्ञ में यजमान को हर्षित कीजिये, और जो विवस्वान् (सूर्य) आपके पिता हैं, उनका मैं इस यज्ञ में आह्वान करता हूँ। वे विस्तृत किये हुये बर्हिषो (कुशों) पर बैठकर यजमान को हर्षित करें ॥५॥

मन्त्र—अंगिरसो पितरो नवग्वा अथर्वाणो भृगवः सोम्यासः।
तेषां वयं सुमतौ यज्ञियानामपि भद्रे सौमनसे स्याम ॥६॥

अंगिरस नामक अथर्व नामक और भृगु नामक हम लोगों के पितर हैं। जो नये-नये प्रकार से (अनेक रूप से) गमन करते हैं, और नूतन प्रीति जनक हैं, जो सोमरस (चन्द्र प्राकृतिक लताओं औषधियों) का पान करते हैं। यज्ञ में भाग लेने योग्य उन पितरों की अनुग्रह युक्त बुद्धि में हम लोग सर्वदा ठहरते रहें, और सौमनस (कल्याण) कारक फलों में सर्वदा रहें। (कल्याण कारक फलों को पाते रहें। ६॥

मन्त्र—प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्वेभिः यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुः।
उभा राजाना स्वधया मदन्ता यमं पश्यासि वरुणं च देवम् ॥७॥

जिस स्थान पर अनादि काल से बने हुए प्रसिद्ध मार्गों से हमारे पुराने पितामह आदि पितर गये हैं। हे मेरे पितः! आप उस स्थान पर चले जाइये। शीघ्र चले जाइये। वहाँ जाकर स्वधा-रूपी अमृत से तृप्त हुए प्रकाशमान यम और वरुण दोनों राजाओं को देखिये ॥७॥

मन्त्र—संगच्छस्व पितृभिः संयमेनेष्टापूर्तेन परमे व्योमन् ।
हित्वा यावघं पुनस्त मेहि संगच्छस्व तन्वा सुवर्चाः ॥८॥

हे मेरे पितः ? इसके बाद आप अपने पितरों के साथ परम उत्कृष्ट आकाश (परमाकाश) स्वर्ग (वैकुण्ठ) नामक स्थान में सम्यक् प्रकार से चले जाइये। इष्टापूर्त (श्रौत स्मार्त) (वेद धर्म-शास्त्रोक्त) दान के फल से वहाँ जाइये। तब इष्टापूर्त के फल से वहाँ जाकर पाप नष्ट हो जाते हैं। तब वरण करने योग्य उस गृह में जाइये, अर्थात् प्राप्त कीजिये। शोभमान और प्रकाशमान (सूक्ष्म) शरीर से युक्त हो सम्यक् प्रकार से जाइये।

आगे के 'अपेतवीत' इस मन्त्र से पितृमेध कर्म में भूमि को प्रोक्षित (सिञ्चित) करते हैं। जल से मार्जन कर परिक्रमा करते हैं—

मन्त्र—अपेतवीत वि च सर्पततोऽस्मा एतं पितरो लोकमक्रन् ।
अहोभिरद्भिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो ददात्यवसानमस्मै ॥९॥

श्मशान भूमि में रहने वाले पिशाच इत्यादि विघ्नकर्ता इस मरे हुए यजमान के दहन स्थान से चले जायें, विशेष रूप से चले जायें। अर्थात् इस स्थान को छोड़कर अनेक प्रकार से दूर देश चले जायें, पितर लोग इस दहन स्थान को यमराज की आज्ञा से इस मरे हुए यजमान के प्रयोजन (कार्य) के लिये स्वीकृत करा लिये हैं। यमराज भी दिन और रात्रि के लिये शुद्धि निमित्तक जल (तिल) इत्यादि से शोधी हुई इस दहन भूमि को मृत यजमान के लिए दे देते हैं (दे दिये हैं)

(इस मन्त्र से आहुति नहीं करनी चाहिये। श्मशान भूमि को जल और तिल से सिंचन किया जाता है। ९॥

मृतजीव को सरमा नामिका कुत्ती के पुत्र आम्रफल के आकार के दो सारमेय (कुत्ते) दोनों ओर से प्रेत के हाथों को पकड़ लेते हैं। वे तीव्रगति वाले हैं, उन्हें हटाना चाहिए। उनसे पृथक् होकर प्रेत को भेजना है। (आ० गृ० ३–२०)।

मन्त्र—अतिद्रव सारमेयौ श्वानौ शवलौ साधुना पथा ।
अथा पितॄन् सुविदत्रान् उपेहि यमेन ये सधमादं मदन्ति ॥१०॥

हे अग्निदेव ! दोनों श्वानों को (से) बचाकर समीचीन मार्ग से जाइये। क्योंकि यम सम्बन्धी दो श्वान (कुत्ते) प्रेत के बाधक हैं। उनसे बचकर (उनको छोड़कर) अच्छे मार्ग से प्रेत को ले जाइये।

वे दोनों श्वान देवों की सरमा नामवाली शुनी (कुत्ती) के पुत्र हैं। उनकी दो सामने और दो ऊपर चार आंखें हैं। जब आप उनसे पृथक् होकर शोभन मार्ग से प्रेत को ले जायेंगे, तो जो पिता यमराज से सुरक्षा एवं प्रसन्नता पाते रहते हैं, और अच्छे ज्ञानवान् हैं। उन पितरों के समीप पहुँचाइये ॥१०॥

(इसी मन्त्र के प्रमाण से श्राद्ध में श्वान वलि दी जाती है। द्वौ श्वानौ श्यामशबलौ धर्मराज पुरे स्थितौ) ताभ्यां वलिं प्रयच्छामि गृह्णीष्व सुरपूजितौ) ॥

—क्रमशः

शिखा धारण–विज्ञान

वैदिक प्रमाण—शिर पर शिखा (चोटी) रखने का विधान वेद शास्त्रों में मिलता है। यजुर्वेद अध्याय १९ मन्त्र ९२ वे में शिखा धारण करना वर्णित है। **केशान् शीर्षन्यशसे श्रिय शिखी'** सिर पर केश (बालों) का रखना यश के देने वाला है और शिखा (चोटी) रखना लक्ष्मी की वृद्धि करने वाला है।

शिखा शब्द की व्याख्या—व्याकरण में शिष् धातु के द्वारा शिखा शब्द बनता है जिसका यह अर्थ होता है कि शेष (बचा रखना) या पूरा व्यय (खर्च) न करना, अर्थात् दिव्य वस्तु का पूरा व्यय न करने वाली और शेष वस्तु को बचा रखने वाली को शिखा कहते हैं। सारांश यह है अनन्त ब्रह्माण्ड से प्राप्त हुए तेज को ग्रन्थि लगाने से रोकती है, और ग्रन्थि खोल देने से यह तेज प्रवाहित हो जाता है। अतएव शिखा में गांठ लगाने का विधान नियम है।

शिखा की गांठ खोलना—शिखा में जो गांठ लगाई जाती है वह इन अवसरों पर खोल देनी चाहिए। जैसे—(पाखाना जाने के समय, स्त्री संगम, सोते समय, भोजन पाने में, दातुन करने आदि के समय चोटी की गांठ खोल देनी चाहिए। शेष अवसरों पर गांठ लगानी चाहिए।

शिखा की ऐतिहासिकता एवं व्यापकता—शिखा चोटी रखने की प्रथा अत्यन्त प्राचीन काल से है। हिन्दू जाति के अतिरिक्त अन्य-अन्य जातियों में भी शिखा रखने की प्रथा थी। शिव पुराण में एक कथा मिलती है—

महर्षि वसिष्ठजी के शिष्य एक विश्व विजेता नाम के थे उनके पिता को पश्चिम देश के कुछ राजाओं ने युद्ध में मार डाला था। अतः वे अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिये उन पश्चिम देशीय राजाओं पर अत्याचार करने लगे। वे राजा लोग उनके इन अत्याचारों से व्याकुल होकर महर्षि वसिष्ठजी की शरण में आये और उनसे प्राण भिक्षा की प्रार्थना की। दयानिधान महर्षि ने उन्हें अभय दान दे दिया, इसके अनन्तर जब उन्हें यह ज्ञात हुआ कि इसका विजेता तो मेरा शिष्य ही है और मैंने इन लोगों को अभयदान भी दे दिया है।

अतः दोनों ओर की प्रतिज्ञा रक्षा के निमित्त महर्षि ने आज्ञा दी कि इनका प्राणापहरण न करके इनकी शिखा काट दो। शिखा के कटने से ये सब शक्तिहीन होकर मृततुल्य हो जायेंगे। महर्षि की आज्ञा शिरोधार्य करके उस वीर क्षत्रिय राजा ने उन सब की शिखा काटकर छोड़ दिया। इस कथा से यह सिद्ध होता है कि शिखा के साथ बल, वीर्य, स्वास्थ्य और आत्मिक उन्नति का कितना प्रबल सम्बन्ध है। इसी कारण शिखा धारण करना हिन्दू जाति का एक श्रेष्ठ चिह्न माना गया है।

हिब्रू जाति के माननीय तलमड नाम के शास्त्र ग्रन्थ में शिखा धारण करने के विषय में बहुत कुछ लिखा है। इससे यह ज्ञात होता है कि हिब्रू जाति भी शिखा धारण करती थी। ईसाइयों के माननीय बाइबिल धर्म ग्रन्थ में एक कथा मिलती है कि सामसन एगोनसटिस नामक व्यक्ति बड़े

प्रतापी हुए हैं। इनके आतङ्क से राजागण कांपते थे। इनके मारने के लिए उन लोगों ने बहुत कुछ उद्योग किये किन्तु उनके सब प्रयत्न निष्फल हुए। अन्त में वे लोग इस निश्चय पर पहुचे कि उनके सिर पर चोटी है। इसी कारण उनमें इतनी प्रबल शक्ति है। उन लोगों ने बड़े षड्-यन्त्र रचकर निद्रित अवस्था में उनकी चोटी काट दी। प्रातःकाल आँख खुलने पर उन्होंने देखा कि उनकी शिखा कट गई है शिखा कटने से उनकी सब शक्ति नष्ट भ्रष्ट हो गई और वे शत्रुओं से पराजित हो गये। इन सब घटनाओं से पता चलता है कि अन्य-अन्य देशों में और अन्य-२ जातियों में भी शिखा धारण करना एक महत्वपूर्ण श्रेष्ठ चिह्न माना जाता है। केश में बल है और सिर मुंडवाने से दुर्बलता आजायगी। इस प्रकार की धारणा प्राचीन पुरुषों में थी।

अपराधी मनुष्यों ने बहुत कष्ट पाने पर भी अपराध स्वीकार नहीं किया किन्तु जब उनके सिर के केश मुंडवा दिये गये तब उन्होंने अपना अपराध स्वीकार कर लिया। ऐसे अनेक दृष्टान्त मिलते हैं।

शिखा की वैज्ञानिकता—गृहस्थ दशा में सिर पर सब बाल रखना असुविधा-सी है। अतएव सिर के ऊपरी भाग में गाय के खुर के बराबर बाल रखना, शेष शिर के बाल बनवाने की विधि शास्त्रों में उपलब्ध होती है। गौ खुर के समान केश रखने से सामने का कुछ अंश और पीछे का कुछ अंश ढक जाता है। यही शिखा का रूप है। योगशास्त्र में वर्णित सिद्धान्त के अनुसार सिर के सामने के इस अंश के नीचे ब्रह्मरन्ध्र है और ब्रह्मरन्ध्र के ठीक ऊपर सहस्रदल कमल में परमात्मा का केन्द्र स्थान है।

शारीरिक विज्ञान के सिद्धान्तानुसार भी सिर के पीछे उस अंश में यानी ठीक उसके नीचे के या मस्तिष्क भाग में काम का केन्द्र स्थान है। अतएव इन दोनों अंशों में शिखा के स्थान में बालों के रखने पर आत्मिक शक्ति बनी रहेगी और चिन्ताशक्ति दबी रहेगी। इसी कारण पृथक् जातियों में और प्रधानतः आर्य जाति में शिखा धारण के साथ बल-वीर्य-तेज आयु और रक्षा का सम्बन्ध बतलाया है। गौ खुर के समान शिखा रखने से सर्वव्यापक ब्रह्म के केश द्वारा शक्ति का आकर्षण भी होता है। यूरोपीय विद्वान् निकाई कोमा महोदय ने भ्रिल नाम की ओज शक्ति का अविष्कार किया था और उसके सम्बन्ध में वर्णन करते हुए उन्होंने एक स्थान पर यह लिखा है—

ध्यान करने के समय ओज शक्ति का प्राकट्य होता है। जब किसी वस्तु पर मन को एकाग्र किया जाता है तब ओज शक्ति इसकी ओर दौड़ा करती है। यदि परमात्मा में मन को एकाग्र किया जाय तो शिखा के द्वारा ओज शक्ति प्रकट होती है और परमेश्वर की शक्ति उसी मार्ग से अपने भीतर आया करती है। सूक्ष्म दृष्टि वाले योगीजन इन दोनों शक्तियों के सुन्दर रङ्ग का भी दर्शन कर लेते हैं। परमेश्वर से जो शक्ति अपने अन्दर आया करती है उसके सौन्दर्य की तुलना नहीं की जा सकती। विज्ञान के द्वारा भी सिद्ध हो गया है कि शिखा (चोटी) के द्वारा ऊपर से शक्ति प्राप्त होती हैं और यही शक्ति बल-वीर्य-तेज और आयु बढ़ने का कारण है।

हमारे शास्त्रों में जो शिखा धारण, शिखा बन्धन, शिखा स्पर्श और शिखा मार्जन आदि प्रक्रियायें लिखी हैं उन सबसे सहस्रदल कमल की ओर ध्यान लगा रहने से आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त होती है। पाश्चात्य विद्वानों ने केश क्या वस्तु है? यह पुरुषों में अधिक क्यों पैदा होती है? और स्त्रियों में कम क्यों होती है? इस विषय को हर गवेषणा करके उन्होंने लिखा है कि—जब स्त्री

और पुरुष के जीवन काल में यौवन आता है तब पुरुष शक्ति का विकास मुख छाती आदि स्थानों में केशों की उत्पत्ति द्वारा होता है किन्तु स्त्रियों में युवा अवस्था आने के समय उस शक्ति का विकास मासिक धर्म स्तनों की वृद्धि आदि के द्वारा होता है । इस प्रकार ये दो शक्तियाँ हैं । अंग्रेजी में पहली शक्ति का नाम कैटाबलिक और दूसरी शक्ति का नाम ऐनाबलिक है । इन दोनों के भेद से स्त्री पुरुष की प्रकृति में भी बहुत कुछ अन्तर पाया जाता है ।

धर्म शास्त्र में जब चाहे बाल न बनवाकर किसी विशेष तिथि में बाल बनवाने की विधि बतलाई है । निश्चित तिथि पर बाल या नाखून काटे जाने से उस समय के नक्षत्र और ग्रहों से शक्ति प्राप्त होती है और नियमित तिथि या नियत समय पर बाल और नाखूनों में शरीर के साथ सूक्ष्म चेतन सम्बन्ध नहीं रहता । अतएव ऐसे समय पर बाल बनवाने से कैटाबलिक नसों को उत्तेजना के द्वारा काम सम्बन्धी नसों में उत्तेजना नहीं फैलती । यदि ऐसे समय में बनवाये हुए बाल या नाखून किसी ऐन्द्रजालिक के हाथ में पड़ जाय तो वह उसका दुरुपयोग या अनिष्ट नहीं कर सकता है । तिथि-वार-नक्षत्र के बिना विचार किये जब चाहे बाल बनवाने से और नाखून कटवाने से सभी आपत्तियाँ प्राप्त हो सकती हैं ।

शिखा के द्वारा प्राण-प्रद वायु का आकर्षण—देववाणी संस्कृत में वृक्ष का नाम पादप का अर्थ है कि वह पृथ्वी से पैरों द्वारा जल को पीता है । पेड़ की जड़ में बहुत-सी सूक्ष्म शाखायें होती हैं उन्हीं के द्वारा जल खींचता है और वृक्ष को परिपुष्ट करता है और वायु मण्डल से शाखाओं व पत्रों द्वारा प्राणप्रद वायु(आक्सीजन)खींचता है । ठीक इसी प्रकार शिखा द्वारा वायु मण्डल से प्राणप्रद वायु का आकर्षण होता है, और वह शरीर में प्रविष्ट होकर शरीर को परिपुष्ट बनाता है और मस्तिष्क को नवीनता तथा मेधा शक्ति सम्पन्न करता है । जब मस्तिष्क मेधाशक्ति-सम्पन्न हो जाता है तब अनेक प्रकार के विचारों का एवं अनुसन्धानों तथा आविष्कारों का उदय हुआ करता है ।

मनुष्य के शरीर की तुलना वृक्ष से की गई है । जिस प्रकार वृक्ष की जड़ की नसें भीतर से खोखली होती हैं । उसी प्रकार मनुष्य के बाल पोले होते हैं । यदि वृक्ष की जड़ की नसें छील डाली जांय तो वृक्ष पृथ्वी से जल नहीं खींच सकता । इसी प्रकार शिखा कटा देने से मस्तिष्क का केन्द्र वायु मण्डल से प्राणप्रद वायु नहीं खींच सकता । प्राणप्रद वायु न मिलने के कारण मस्तिष्क पुष्ट नहीं हो सकता और न वह अधिक मेधावी ही बन सकता है । शिखा धारी मनुष्य की तुलना करने पर उसकी मस्तिष्क शक्ति का स्वयं निर्णय हो सकता है । यद्यपि मस्तिष्क शक्ति की अभिवृद्धि में अन्य ही कारण हैं किन्तु एक यहभी प्रधान है । जो शक्ति वृक्ष पर कार्य करती है वही शक्ति शिखा (चोटी) पर भी करती है । वृक्ष की जड़ को पृथ्वी का केन्द्र आर्कषित करता है और वृक्ष के पत्ते तने और शाखाओं को सूर्य अपनी ओर आर्कषित करता है । वृक्षों में भी जिस वृक्ष की जड़ पृथ्वी में जितनी गहरी चली जाती हैं, उस वृक्ष में उतनी ही अधिक आकर्षण शक्ति होती है और वह वृक्ष दृढ़ एवं पुष्ट होकर अधिक समय तक स्थिर (टिकाऊ) रहता है । क्योंकि उसका सम्बन्ध पृथ्वी के केन्द्र से अधिक होता है ।

उदाहरण के लिये पीपल के वृक्ष को देखिये, उसकी जड़ के सूत भूमि में बहुत नीचे तक फैले हुए रहते हैं । इसीलिए पीपल वृक्ष में विद्युत शक्ति अधिक है । जिसकी परीक्षा इस प्रकार है कि

पीपल की लाख को फलालैन से रगड़कर कागज के छोटे-२ टुकड़े उसके पास ले जाओ तो वह टुकड़ा खिचकर लाख से आ चिपटेगा।

जिस वृक्ष में आकर्षण शक्ति अधिक होती है, वह पवित्र होता है। इसी कारण सब वृक्षों में पीपल पवित्र माना जाता है। स्नान करके पीपल के समीप बैठकर भजन पूजन करने से अधिक आकर्षण शक्ति होती है। शिखा पीपल से आकर्षण-शक्ति और प्राणप्रद वायु को प्राप्त करती है। आधुनिक वैज्ञानिक महानुभावों ने भी यह सिद्ध किया है कि वृक्षों में जीव है और वे सोते, जागते और सुनते आदि सब कार्य करते हैं और इनकी वृद्धि की गति के यन्त्र का भी आविष्कार किया है। किन्तु धार्मिक जनता परम्परा से अपने मानसिक भाव द्वारा आराधना रूप में अखिल ब्रह्माण्ड नायक, जगन्नियन्ता भगवान् तक पहुँचाने की प्रार्थना करती चली आई है और करती है।

शिखा का महत्व—शिखा-हिन्दू धर्म की ध्वजा और हिन्दू-संगठन का मुख्य चिह्न है। जो सिद्धान्तों में भिन्नता होने पर भी सबको एक सूत्र में संगठित करती है। अर्थात् मत विचारों में पृथक्-२ होने पर भी शिखा धारण में सबका एक मत है। जिस प्रकार सितार में खूटी के द्वारा तारों को नियन्त्रित कर कार्य में लाया जाता है। उसी प्रकार चोटी भी है, क्योंकि चोटी सिर के मध्य में स्थित होती है। जहाँ शिराओं (नसों) का केन्द्र है। उन सबकी रक्षा के लिये तथा उनको अपने-२ कार्य में लगाने के लिये एक समान हैं। शिखा के स्थान के नीचे मस्तिष्क (दिमाग) है। शिखा धारण करने से मस्तिष्ककी रक्षा होती है तथा कपालास्थि भी गोपद के प्रमाण से सुरक्षित रहती है।

योग शास्त्र में बतलाया है कि चोटी के नीचे ब्रह्मरन्ध्र में अमृत का कुण्ड और हृदय में सूर्य का कुण्ड है। अमृत कुण्ड से अमृत के निकल कर सूर्य में गिरकर भस्म हो जाता है गिरते हुए अमृत कुछ कण चोटी के द्वारा आकर्षित होकर मस्तिष्क में पहुंच जाते हैं। किन्तु मनुष्य से कुछ ऐसे भी कारण बन जाते हैं और बनते रहते हैं जिनसे वे अमृत के कण मस्तिष्क से भी निकल जाते हैं। उन अमृत कणों को मस्तिष्क में रखने के लिये गायत्री मन्त्र से या किसी भगवान् के नामोच्चारण से चोटी में गांठ लगाई जाती है।

॥ इति शिखा धारण विज्ञान ॥

प्रेषक–पं० श्रीनि० खगेन्द्राचार्यजी, बम्बई

घनश्याम से—

नक्श है दिल पै तस्वीर घनश्याम की।
और जुबां पर है तकरीर घनश्याम की॥
जिसको छूकर शिला नारी भी तर गई। ढूंढ़ता हूं वो अक्सीर घनश्याम की॥
मस्त गजराज मन इस लिए बंध गया। पड़ गई जुल्फ जंजीर घनश्याम की॥
इस कदर मेरी आँखें मिलीं श्याम से। आ गई इनमें तासीर घनश्याम की॥
'बिन्दु' दृग के नहीं दिल के टुकड़े हैं ये। चल चुकी इन पै शम्शीर घनश्याम की॥

श्रीभाष्यकार-भगवान्-श्रीरामानुजाचार्य

कृतेऽनन्तः समाख्यातस्त्रेतायां लक्ष्मणस्तथा । द्वापरे बलरामश्च कलौ रामानुजो मुनिः ।।

[श्रीनारायणदास जी "भक्तमाली" भावुक विद्वान् सन्त हैं । आपने भक्तों के चरितों को स्वरचित कविता में आबद्ध किया है । भगवान् भाष्यकार श्रीरामानुजाचार्य जी महाराज का जीवन भी आपने पद्यवध्य प्रस्तुत किया है, जो यहां उद्धृत है ।
—सम्पादक]

स्वामी रामानुज आचार्य जगत में प्रगट शेष अवतार ।।
नारायण ते आज्ञा पाये, रामानुज है जग में आये ।

× × ×

दई एक हरि ते शर्त्त लगाय, जिन्हें प्रभु—सम्मुख धर दूँ लाय ।
तिनहिं लीजो अवश्य अपनाय,
दोहा : एवमस्तु कहि नाथ ने, करी शर्त्त स्वीकार ।
भूतपुरी में प्रकट भे, आचारज वपु धार ।।
दीर्घ काल करि वास जगत में, किये जीव-उद्धार ।।स्वामी०
दाक्षिणात्य, कुल विप्र ललामा केशव भट्ट पिता को नामा ।

× × ×

मातु श्री कान्तिमती गुण खानि, सतत् अनुकूल सुदर्शन पाणि ।।
इष्ट प्रभु वरदराज सुख दानि,
दोहा : सुतहिं व्याहि, ❀ पितु तनु तजे, रही अवस्था थोर ।
तेहि छिन आचारज रहे, षोडश बर्ष किशोर ।।
अल्प वयस में परचो शीश, व्यवहार जगत को भार ।।स्वामी०
काञ्चीपूर्ण स्वामि सुखराशी, गुरुवर पूरणमल्लि निवासी ।

× × ×

मिले अभिभावक सुखद सुजान, हितैषी परम कृपा की खान ।
दुलारत वरदराज भगवान,
दोहा : गये शास्त्र अध्ययन हित, यादव गुरु के पास ।
प्रतिभा श्री आचार्य की, क्रम क्रम होत विकास ।।
मत्सर भरचो हृदय यादव के, महिमा निरखि अपार ।।स्वामी०

काञ्चीपुरी नृपति की बेटी, वय किशोर गुण रूप लपेटी ।

× × ×

लग्यो तेहि ब्रह्म पिशाच कराल, यतन क्रिय मोचन हित भूपाल ।
न छोड़त, कन्या भई बेहाल,
दोहा : राजा के आह्वान पै, लिये शिष्य समुदाय ।
मोचन हेतु पिशाच—भय, यादव पहुँचे जाय ।।
हँस्यो ठठाय पिशाच, सकै कछु मेरो नहीं बिगार ।।स्वामी०

❀ पत्नी नाम तंजमाम्बा

यन्त्र मन्त्र मँह मैं हू राचा, अहंकार वश भयउ पिशाचा ।

× × ×

तुम्हारी पूर्व जन्म की बात, अहै यादव ! मोकूँ सब ज्ञात ।
फिरै तू व्यर्थ ईतो इतरात,

कवित्त : जंगल को गोहारा तू रह्यो वृक्ष—कोटर में,
विप्र बन्यो चाटि के प्रसादी शीथ संत की ।
हमें तो सुधारै क्या प्रयोग यन्त्र मन्त्र करि,
तोकूँ है खबर नाहिं निज आदि—अन्त की ।
भरयो अहंकार में फिरत पण्डिताई लिये,
करै मूढ़ निन्दा नित्य सन्त भगवन्त की ।
चाहै जो कल्यान तो विहाय अभिमान अभु,
भजो भगवन्त, लै शरण रमाकन्त को ।

दोहा : तेरे शिष्यन माँहि एक, अहै योग्य सुकुमार ।
जाको चरणामृत लहै, होवे मम उद्धार ।।
रामानुज है नाम, देहु मम मुख चरणामृत डार ।।स्वामी०
चरणामृत लं, ज्यों मुख डारयो, प्रभु को प्यारो नाम उचारयो ।

× × ×

मुक्त ह्वै गयो पिशाच प्रभु—धाम, नगर में हल्ला मच्यो तमाम ।
ख्यात भयो रामानुज को नाम,

कवित्त : अन्न वस्त्र द्रव्य आदि वस्तु बहु भेंट दई,
भूप की प्रसन्नता को ओर है न छोर है ।
रामानुज अहैं अवतारी कोऊ पार्षद,
मच्यो सारी काञ्चीपुरी नगर में शोर है ।
घटना घटी है सबके आँखन के आगे आज,
गली गली चर्चा उसी की चहुँ ओर है ।
सबही को हर्ष, किन्तु यादव को विषाद भयो,
मत्सर को भाव हिय को उठयो झकझोर ह्वै ।।

दोहा : यदपि धरे गुरु चरण में, रामानुज सब भेंट ।
तउ यादव ने मनहिं मन, कसी शत्रुता—फेंट ।।
कबहुँ कबहुँ मतभेद बढ़त, जब हो वेदान्त विचार । स्वामी०
यादव ने षड्यन्त्र रचायो, मारन की मन में ठहरायो ।

× × ×

बहानों करि के तीर्थ प्रयाग, हिये धधकति हिंसा की आग ।
लग्यो गोविन्द को पतो सुराग,

कवित्त : गोविन्द हैं मौसेरे भाई, रामानुज स्वामी जू के, ❀
धीरे से बताये, तोही मारिबे को लायो है ।
जैसे बनें, साथ छोड़ि छिपि के बचावो प्रान,
प्रभु की कृपा ते यह भेद मैंने पायो है ।
सुनत ही छिपे वन सघन में रामानुज,
जैसे तैसे यादव की नज़र बचायो है ।
प्राण बचि गये किन्तु विन्ध्यवन बीहड़ में,
रहि के अकेल असहाय घबड़ायो है ॥

दोहा : सङ्ग साथ नहिं कोउ अब, घर है अतिशय दूर ।
कौन सुनै, कासों कहूँ, भई चिन्ता भरपूर ॥
मन ही मन, श्री वरदराज ते, कीन्ही करुण पुकार ॥स्वामी०
व्याध बने, लिये व्याधिनि साथा, आइ गये झट प्रभु श्री नाथा ।

× × ×

पूछि के परिचय औ गन्तव्य, बतायो अपनो हू मन्तव्य ।
सुजन की चिन्ता मम हन्तव्य,

कवित्त : चिन्ता जनि करो, जानो हमें भी है वाही ठौर,
सत्यव्रत क्षेत्र, जाको काञ्चीपुरी नाम है ।
देखी भाली गैल मेरी, चलूँ मैं तुम्हारे संग,
दर्शन पाऊँ वरदराज जू को धाम है ।
चलत चलत एक कोस पै विरमि रहे,
थक्यो है शरीर और होय गई शाम है ।
चलेंगे सबेरे अब, भयो हैं अंधेरो लाल,
करि ले विश्राम, आज यहीं को मुकाम है ॥

दोहा : अर्द्ध रात्रि व्याधिनि कहति, लागी मोकूँ प्यास ।
प्रियतम प्यारे प्राणधन, जल की करो तलाश ।
कहत व्याध धरु धीरज अबही, होवन दे भिनुसार ॥स्वामी०
ब्रह्म मुहूर्त्त व्याधिनी जागी, अतिशय प्यास जतावन लागी ।

× × ×

चले श्री रामानुज तत्काल, खोजि जल ले आऊँ अब हाल ।
कूप ते लाये नीर निकाल,

दोहा : तीन बेर जल प्याय के, आये चौथी बेर ।
हरि भये अन्तरधान यें, हारे तिन कहुँ हेर ॥
यह तो काञ्चीपुरी अहै, देखे चहुँ ओर निहार ॥स्वामी०

—क्रमशः

❑ मौसी का नाम महादेवी अथवा दीप्तिमती

गतांक से आगे—

महाभारतामृतम्

●

हिमालय की चौरस भूमि में डेरा डालकर सभी योद्धा वहाँ एकत्र हुये। जिनमें शल्य, चित्रसेन, शकुनि, अश्वत्थामा, कृपाचार्य, कृतवर्मा, सुषेण, अरिष्टसेन, धृतसेन, जयत्सेन, आदि ने वहाँ रात बिताई। रणभूमि के योद्धाओं ने कहा राजन्! आप किसी को सेनापति बना कर युद्ध करो जिससे हम शत्रुओं पर विजय पासकें। वह अश्वत्थामा के पास गया और बोला—गुरुपुत्र! अब आप ही हमारे सहारे हैं। आप धनुर्वेद के दश अंगों—व्रत, धृति, पुष्टि, स्मृति, क्षेम, शत्रुभेदन, चिकित्सा, उद्दीपन, और कृष्टि तथा दीक्षा, शिक्षा, आत्मरक्षा, और इसका साधन इन चार चरणों के सम्यक् ज्ञाता एवं पालनकर्ता हैं। आपही बताइये अब किसे सेनापति बनाकर शत्रुओं पर विजय प्राप्त की जाय। अश्वत्थामा ने कहा—राजन्! यह शल्य सद्गुणों से सम्पन्न है, इसे ही सेनापति बनाकर युद्ध किया जाय। दुर्योधन ने सादर शल्य से कहा राजन् अब आप ही सेनापति बनिये। शल्य ने कहा राजन्! जो तुम चाहते हो वही होगा दुर्योधन बोला—मामाजी! आप ही हमारे शत्रुओं का संहार करिये। दुर्योधनने शल्य का विधिवत् सेनापति पद पर अभिषेक किया। शल्यने कहा राजन्! मैं आज पाण्डवों, पाञ्चालों को मार डालूगा। इस समय श्रीकृष्ण ने राजा युधिष्ठिर को शल्य वध के लिये प्रोत्साहित किया। आशा बड़ी बलवती होती है—द्रोण, भीष्म, कर्ण आदि बलवानों के वध हो जाने पर शल्य पाण्डवों को जीतेगा यह दुर्बुद्धि दुर्योधन को हुयी। शल्य रथ पर बैठकर सर्वतोभद्र नामक व्यूह बनाकर पाण्डवों पर टूट पड़ा। पाण्डव भी तीन भागों में हो शल्य की सेना पर चढ़ आये। पाण्डवों के सेनापति धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, सात्यकि थे। अर्जुन ने कृतवर्मा पर आक्रमण किया। भीमसेन कृपाचार्य पर आक्रमण किया। दस हजार कौरव वीरों ने पाण्डवों पर आक्रमण किया। इस समय कौरवों के पास ग्यारह हजार रथ, दस हजार सात सौ हाथी, दो लाख घोड़े, तीन करोड़ पैदल शेष रह गये थे। पाण्डवों के पास छः हजार हाथी, दस हजार घोड़े, दो करोड़ पैदल, सेना शेष थी। अब दोनों पक्ष के वीरों में घमासान युद्ध छिड़ गया, किन्तु पाण्डवों के प्रहार से क्षत विक्षत कौरव सैनिक हताश होकर सबके देखते-देखते चारों दिशाओं में भाग खड़े हुये। शल्य ने अपने सारथि से कहा—सारथे! तुम मुझे शीघ्र युधिष्ठिर के पास पहुँचाओ। उसने अविलम्ब शल्य के रथ को युधिष्ठिर तक पहुँचा दिया। पाण्डव सेना भी शल्य तक आ गयी किन्तु शल्य ने उसे आगे बढ़ने से रोक दिया। इसी समय नकुल ने कर्ण पुत्र चित्रसेन पर धावा बोला। चित्रसेन ने एक पैने भल्ल से नकुल के धनुष को काट डाला। नकुल के तीन बाणों से उसे गहरी चोट पहुँचायी। शल्य ने नकुल के घोड़ों, ध्वज, सारथि को धराशायी कर दिया। नकुल ने चित्रसेन कोधड़ से काट डाला। कर्ण के दो पुत्र सुषेण और सत्यसेन वहाँ नकुल पर चढ़ आये। घमासान युद्ध हुआ। नकुल ने रथशक्ति का प्रयोग किया, जिससे सत्यसेन मारा गया। सुषेण क्रोधाविष्ट हो उठा, नकुल को रथहीन देख द्रौपदी पुत्र सुतसोम वहाँ आया। नकुल ने सुषेण का मस्तक काट डाला। उधर से सात्यकि, भीम, नकुल सहदेव आदि युधिष्ठिर को आगे करके चढ़ आये। भयङ्कर संग्राम होने लगा। संशप्तकों का संहार कर अर्जुन ने भी कौरवों पर आक्रमण किया। यह देख कौरव सेना में मोह छा गया।

उस समय शल्यने अपने पराक्रम दिखाने में कोई कसर न रखी, किन्तु पाण्डवों की बाण वर्षासे शल्यकी सेना घबरा गयी। शल्यको पाण्डवोंसे अवरुद्ध देख कृतवर्मा, कृपाचार्य, उलूक, शकुनि,अश्वत्थामा ने शल्य की रक्षा की। कृतवर्मा ने भीम को आगे बढ़ने से रोक दिया। दुर्योधन ने श्रीकृष्ण और अर्जुन पर भारी बाण वर्षा की। अब द्वन्द्वयुद्ध होने लगा। अब भीमने गदा लेकर शल्य पर प्रहार किया, घमासान युद्ध होने लगा। शल्य का युधिष्ठिर से पीछा किये जाने पर शल्य अश्वत्थामा के रथ पर बैठकर तुरन्त वहाँ से भाग गया। अब की वार शल्य और तयार होकर आया। परन्तु भीम, सात्यकि, नकुल, सहदेवसे युधिष्ठिरके साथ लड़ रहे शल्यको ललकारने लगे। युधिष्ठिरने शक्ति चलायी। जो शल्यके वक्षः स्थलको चीर कर धरतीमें समा गयी। वह पृथ्वी पर गिर पड़ा। इस समय कौरव आपस में ही लड़ कर जीवन से हाथ धो बैठे। शल्यका भाई भी युधिष्ठिरके बाणसे मारा गया। अब ऐसी स्थिति आ गयी कि कौरव टिक न सके, वे भाग खड़े हुये। इस युद्ध में भीम ने इक्कीस हजार पैदलों का बध कर दिया। कौरव सेना हतास हो गयी तब दुर्योधन ने उसे उत्साहित किया। जब कौरव पक्ष पुनः युद्ध के लिये लौट आया, तब म्लेच्छों का राजा शाल्व एक गजराज पर चढ़कर पाण्डवों पर चढ़ आया। उसे देख सहसा भगदड़ मच गयी। धृष्टद्युम्न इसे सह न सके। उसने तीन नाराचों से घायल कर दिया। पाँच सौ बाणों से उस गजराज को मोड़कर भगा दिवा। शाल्व ने उसे लौटाया और पाञ्चालराज के रथ की ओर दौड़ाया। धृष्टद्युम्न हाथ में गदा लेकर रथ से कूद पृथ्वी पर आ गये। शाल्व के गज ने उसका रथ चकनाचूर कर डाला। इस समय भीम, शिखण्डी, सात्यकि सहसा आ गये। सबने मिल कर उस गजराज पर प्रहार किया। हाथी का कुम्भस्थल फट गया। वह सहसा गिर गया। सात्यकि ने तीखे भल्ल से शाल्व का सिर काट गिराया और उस गजराज के साथ शाल्वराज भी धराशायी हो गया।

सात्यकि द्वारा ही क्षेमधूर्ति का वध होते ही कृतवर्मा का युद्ध हुआ, उसमें उसकी पराजय होते ही कौरव सेना भाग खड़ी हुयी। यह स्थिति दुर्योधन को सह्य न हो सकी। वह स्वयं रथारूढ़ हो युद्ध करने आया, यह युद्ध भी भयंकर था। इस युद्ध में कौरव पक्ष के सात सौ रथियों का वध हो गया। कौरव पाण्डवों का यह युद्ध मर्यादा शून्य था, शकुनि ने अपनी कूटनीति का समावेश इस युद्ध में भी किया किन्तु उसकी पराजय ही हुई। शकुनि ने कौरव सेना को युद्ध की प्रेरणा दी और राजा दुर्योधन के बारे में पूछा कि वे कहाँ हैं। वीर बोले, प्रभो! कुरुराज रणक्षेत्र के मध्यभाग में खड़े हैं। आप वहाँ जायेंगे तो उन्हें पासकेंगे। राजन्! आप शत्रुसेना का नाश कीजिये। घुड़सवारों को मैंने जीत लिया है। उन कौरवों को पास आता देख अर्जुन ने श्रीकृष्ण से कहा। जनार्दन! आप स्वस्थचित्त होकर इन घोड़ों को इस सैन्य सागर में प्रविष्ट कीजिये। आज मैं अठारहवाँ दिन हो जाने से इस युद्ध का अन्त कर दूँगा। ये बड़े नादान हैं। भीष्म जी के धराशायी होने पर भी इन्होंने युद्ध जारी रखा। दुर्योधन को युद्ध के सिवा अन्य उपाय से जीतवा सम्भव नहीं है यह बात मुझे विदुरजी ने कई वार कही। आज मैं क्षत्रपक्ष के समस्त योद्धाओं को मार गिराऊँगा। तब दुर्योधन युद्ध करने आयेगा, उसके वध हो जाने पर इस वैर का अन्त होगा। श्रीकृष्ण ने शत्रुसेना में प्रवेश किया। अर्जुन ने बाणवर्षा आरम्भ की। रणभूमि बाणों से आच्छादित हो गयी। कौरवों की सेना का यथेच्छ विनाश कर दिया।

अर्जुन और भीम ने कौरवों की रथसेना एवं गजसेना का संहार कर दिया। दुर्योधन रणभूमि छोड़कर कहीं जा छिपा। कौरवों की सेना में भगदड़ मच गयी। अश्वत्थामा दुर्योधन की खोज करने

लगा । सेना पलायन करने लगी दुर्योधन के न दीख पड़ने के कारण उसके ग्यारह भाई एक साथ मिलकर भीम के ऊपर टूट पड़े । इनके नाम थे—दुर्मर्षण, श्रुतान्त, जैत्र, भूरिबल, रवि, जयत्सेन, सुजात, दुर्विग्रह, दुर्विमोचन दुष्प्रधर्ष, श्रुतर्वा। भीम रथ पर बैठकर इन पर भीषण बाण वर्षा करने लगे जिससे ग्यारहों का वध हो गया । और भी चतुरंगिणी सेना भी मारी गयी। भीम इस विजय पर हर्ष से ताल ठोकने लगे । श्रीकृष्ण अर्जुन को समझाने लगे कि अधर्म पक्षके हैं अतः इनको मारो। अर्जुन ने सत्यकर्मा, सत्येषु तथा पैंतालीस धृतराष्ट्र पुत्रों और सेनासहित सुशर्मा का वध कर दिया गया। उधर भीम ने धृतराष्ट्र पुत्र सुदर्शन का वध कर दिया। अब शकुनि ने सहदेव पर धावा किया। उसने सहदेव के मस्तक पर ऐसा प्रहार किया कि वह रथ की बैठक में धम्म से बैठ गया। यह देख भीम ने कौरव सेना को आगे बढ़ने से रोक दिया और उन्हें विदीर्ण कर दिया। शकुनि वहाँ से भाग खड़ा हुआ । उसके साथ जो योद्धा भाग रहे थे, उन्हें दुर्योधन के समझाने पर वे पुनः लौटे और पाण्डवों पर टूट पड़े । इतने में स्वस्थ हुये सहदेव ने दस बाणों से शकुनि को बांध लिया और तीन बाणों से उसके घोड़ों को मार डाला, उसका धनुष काट डाला। पिता की रक्षा करते हुये उलूक ने भीम को सात और सहदेव को सत्तर बाणों से क्षत विक्षत कर दिया । सहदेव ने एक भल्ल द्वारा उलूक का मस्तक काट डाला । पुत्र को मरा देख शकुनि लम्बी सांस खीचने लगा और चिन्ता में पड़ गया। शकुनि और सहदेव का डट कर युद्ध हुआ । सहदेव ने भल्ल से शकुनि के मस्तक को काट कर गिरा दिया। यह देख कौरव सेना सहित दुर्योधन पैदल ही भागने लगा। बचे हुए शकुनिके साथी और कौरव सेना का वध कर दिया गया । अब दुर्योधन ही बचा है, वह भी बुरी तरह घायल अवस्था में था।

अब पाण्डवों की सेना में दो हजार रथ, सात सौ हाथी, पाँच हजार घोड़, दस हजार पैदल बच गये थे। धृष्ट्द्युम्न सेनापति था । दुर्योधन अकेला हो गया था । अब वह पूर्व दिशा की ओर भागा। उस समय विदुरकी बातें याद आईं। अब अश्वत्थामा, कृतवर्मा, कृपाचार्य, दुर्योधन ये चार महारथी जीवित थे । संजय को कैद में सात्यकि तलबार लेकर मारना चाहता था, उसी समय श्रीकृष्ण द्वैपायन व्यासजी सहसा आकर बोले–संजयको जीवित छोड़ दो। व्यासजी की बात सुनकर सात्यकि ने संजय को कैद से मुक्त कर दिया। एक कोस ही मैं चला था कि वहाँ दुर्योधन को गदा लिये अकेले खड़ा देखा । मुझे देख उसके नेत्रों में आंसू भर आये। मैं भी शोक में डूब गया । मैंने सोचा 'विधाता ही सबसे बलवान् है ।' दुर्योधन ने संजय से कहा कि तुम पिताजी से कहना कि मैं इस सरोवर में अपनी जान बचाकर छिपा हूँ । दुर्योधन उस सरोवर में छिप गया और माया से उसका पानी बांध दिया । अश्वत्थामा, कृपाचार्य, कृतवर्मा तीनों वहाँ आये और दुर्योधन के बारे में पूछने लगे मैंने सब बताया। सरोवर का मार्ग भी बताया । अश्वत्थामा ने कहा कि राजा दुर्योधन नहीं जानते हैं कि हम तीनों महारथी उनके साथ जूझने को अभी हैं । इतने में पाण्डवों की सेना को आती देख वे वहाँ से भागे, वे कृपाचार्य के रथ पर मुझे भी बैठाकर छावनी तक ले आये । तदनन्तर स्त्रियों को लेकर नगर की ओर प्रस्थान किया। उस समय वे नारियाँ करुण क्रन्दन करने लगीं थीं । जिन राजमहिलाओं को सूर्य भी नहीं देख पाता था, उन्हें साधारण लोग भी देख रहे थे। उस समय युयुत्सु ने समयोचित कर्तव्य का विचार किया। उसने राजा युधिष्ठिर और श्रीकृष्ण की आज्ञा लेकर उन मन्त्रियों के साथ नगर में प्रवेश करने का निश्चय किया।

—क्रमशः

समाचार-स्तम्भ—

अहोबिलपीठाधीश की नागपुर यात्रा वृत्त

परमपूज्य जगदाचार्य श्रीउत्तराहोबिल झालरिया मठाधिपति अनन्तश्री श्रीघनश्यामाचार्य जी महाराज डीडवाना, पुष्कर नेपालदेश की धर्मप्रचार यात्रा करके श्री श्रीयुवराज स्वामीजी के साथ कलकत्ते से दिनांक १७–६–९५ को प्रातः नागपुर पधारे । स्टेशन पर उपस्थित शिष्य समुदाय द्वारा स्वागतोपरान्त श्रीआचार्य चरण शोभायात्रा के रूप में श्रीवेङ्कटेश देवस्थान पधारे ।

जयविजयबालालय प्रतिष्ठा महोत्सव

श्रीवेङ्कटेश देवस्थान में भगवान् के साथ ही प्रतिष्ठित द्वारपालों के स्थान पर महाबलीपुरम् में निर्मित विग्रह की स्थापना हेतु देवस्थान के न्यासियों के अनुरोध को स्वीकार कर श्रीआचार्यचरणों ने पञ्चदिवसीय प्रतिष्ठा महोत्सव की आज्ञा प्रदान की । इस प्रकार दिनांक २५–६–९५ से २९–६–९५ तक श्री श्रीआचार्यचरणों की अध्यक्षता में एवं श्रीयुवराज स्वामीजी की उपस्थिति में दाक्षिणात्य विद्वान् T. N. सुन्दराचार्य जी एवं E श्रीनिवासाचार्य द्वारा पाञ्चरात्रागम विधिके अनुसार कार्य होना निश्चित हुआ । चारों वेदों पुराणों के पठन करने वाले योग्य विद्वानों के द्वारा कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ । यजमान थे श्रीगोविन्द बाबू सारड़ा एवं परिवार । प्रतिदिन प्रातः सायं हवन एवं पारायण तथा श्रीभगवान् का दिव्यशृङ्गार की झांकी और प्रातः सायं पूज्य आचार्यश्री एवं श्रीयुवराज स्वामी जी का सामयिक उद्बोधन से सभी श्रोताओं के मानस पर विलक्षण प्रभाव पड़ा जिसकी परिणति यज्ञोपवीत संस्कार थी

यज्ञोपवीत संस्कार—दिनांक ३०–६–९५ को दोनों आचार्यों की पावन सन्निधि में चालीस से अधिक भक्तों ने यज्ञोपवीत संस्कार कराकर द्विजत्व प्राप्त किया ।

इसी दिन श्रीआचार्यचरण कामठी के भक्तोंके आग्रह पर कामठी पधारे । वहाँ प्राचीन देवालय का दर्शन कर अपना उपदेशामृत प्रदान किया ।

अहोबिलपीठाधीश की नेपाल की यात्रा—पूज्य श्रीघनश्यामाचार्य जी महाराज ने भक्तों के आग्रह पर दिनांक २४–५–९५ से १४–६–९५ तक नेपाल यात्रा की । इस यात्रा में श्रीयुवराज स्वामीजी महाराज साथ थे । काबरा परिवार के निवेदन पर विराट्नगर कृष्णकुञ्ज, में दिनांक २४–५–९५ को श्रीआचार्यचरणों की पावन सन्निधि में गृह प्रवेश सम्पन्न हुआ । स्थानीय भक्तों ने श्रीचरणों की पूजा की । तदनन्तर इनरुवा के भक्तों के निवेदन पर श्रीआचार्यचरण श्रीसत्यनारायण मन्दिर पधारे । वहाँ श्रीवैष्णव संस्कार से दीक्षित किया । हनुमाननगर के भक्तों के आग्रह पर काबरा आवास में रहते हुये श्रीविष्णु मन्दिर का श्रीब्रह्मोत्सव आयोजन में पधारे । वहाँ १०८ श्रीवैष्णव संस्कार प्रदान किया । शतकलशाभिषेक कल्याणोत्सव, अष्टोत्तर सहस्र तुलसी अर्चना, वेदोपनिषद पारायण, हवनादि कि कार्य बहुत सुन्दर सम्पन्न हुआ । भगवान की शोभायात्रा में आबवृद्ध समस्त सनातन धार्मिकों ने भाग लिया । रूपनगर में एक वैकुण्ठोत्सव सम्पन्न हुआ ।

श्रीआचार्यचरणों के नेपाल प्रवास में एक अद्भुत बात देखने आई—रूपनगर में ५ वर्षों से वर्षा नहीं हुयी थी, परन्तु श्रीचरणों के वहाँ पधारने पर तीनों दिन वर्षा हुई। यह उनके तप का प्रभाव ही है—

यस्य प्रसन्नो भगवान् गुणैर्मैत्र्यादिभिर्प्रभुः।
तस्मै नमन्ति भूतानि निम्नमाप इव स्वयम्॥ (श्रीमद्भा० ४ ९-४७)

आचार्यचरण श्रीहनुमान मन्दिर पधारे। राजविराज के भक्तों का उत्साह इतना अधिक था कि अगवानी करने रूपनगर ही पहुँच गये। राजविराज में द्विदिवसीय ब्रह्मोत्सव, हनुमान जी का अष्टोत्तर शतकलशाभिषेक, कठौना में मिल को आशीर्वाद, हनुमद्दर्शन, लहान पधारना, दि० ८-६-९५ को यज्ञोपवीतसंस्कार, पाञ्चाली मन्दिर दर्शनार्थ पधारे। जोगबनी, फारबीसगंज, कटिहार होते हुये कलकत्ता पधार गये। इस यात्रा में अनेक धर्म प्रेमियों ने अपने जीवन को धन्य बनाया।

भारत कल्याण मंच की तीर्थ यात्री सेवा

श्रीजगन्नाथपुरी, ३० जून रथ यात्रा पर्व पर इस वर्ष भी सदैववत् यहाँ पर यात्री सेवा की गई। उड़ीसा राज्य के बालेश्वर भुवनेश्वर, कटक, पुरी आदि जिलों से समागत ४५ कार्यकर्त्ताओं ने प्रातः ९ बजे से सायं चार बजे तक दही, चीनी, चिवड़ा वितरण किया। १० हजार लोगों ने लाभ उठाया। २० हजार लोगों को शिकंजी पिलाई गई, नेतृत्व उड़ीसा राज्य संयोजक श्रीसदानन्द जी ने किया। सहयोगी महन्त डा० अयोध्यादास जी, पुरी, श्रीराधेश्याम सिंहानिया, कटक आदि महानुभाव थे, राष्ट्रीय महामन्त्री पण्डित द्वारकाप्रसाद पाटोदिया भी पुरी पहुँचे।

—प्रेषक—द्वारकाप्रसाद पाटोदिया

श्रीतुलसी जयन्ती सम्पन्न

"आदर्श चरित्र के निर्माण में गोस्वामी तुलसीदास जी ने पूर्ण योगदान दिया है"

३ अगस्त ९५ को उक्त विचार श्रीदेवदत्त जी शर्मा जिलाधिकारी मथुरा ने स्थानीय तुलसी रामदर्शन स्थल ट्रस्ट, वृन्दावन द्वारा आयोजित तुलसी जयन्ती समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में व्यक्त करते हुये कहा कि गोस्वामी तुलसीदास द्वारा निर्दिष्ट आचरण का अनुसरण ही आज के युग में उनके लिये सच्ची श्रद्धांजलि होगी। कार्यक्रम की अध्यक्षता पूज्य श्रीआनन्ददेवजी महाराज टाट बाबा वृन्दावन ने की। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि ब्रजभूमि को भाव की आँखों से देखा जा सकता है भावुक भक्त गोस्वामीजी ने यहाँ श्रीकृष्ण के दर्शन श्रीराम के रूपमें किये। समारोह के मुख्य वक्ता श्रीचैतन्य कृष्णाश्रम तीर्थजी महाराज नें श्रीगोस्वामी तुलसीदास के रामचरित मानस को श्रीमद् भागवत की मौलिक सारगर्भित एवं संक्षिप्त टीका बतलाया अन्य वक्ताओं में श्रीमदनमोहनजी पाण्डेय (समस्तीपुर) श्रीकिशोरीरमणाचार्य जी, श्रीव्यासनन्दन, श्रीरामजी, श्रीभूतिकृष्ण गोस्वामी जी, श्रीपीयूषजी गोस्वामी, डा० शैलेन्द्रनाथजी पाण्डेय, श्रीफणीलालजी गोस्वामी, श्रीमधुसूदनाचार्य जी, श्रीराजाराम जी मिश्र उल्लेखनीय हैं।

प्रवचनों के उपरान्त श्रीतुलसी रामदर्शन के मैनेजिंग ट्रन्टी डा० प्राणगोपाल जी आचार्य ने धन्यवाद भाषण किया। अन्त में प्रसाद वितरण के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ। समस्त उत्सव स्व० श्रीबलराम जी मिश्र के अनुज श्रीलक्ष्मणप्रसाद जी मिश्र (संस्थापक ट्रस्टी) के तत्वावधान में मनाया गया। प्रवचन मंच का संचालन डा० गिरिराज शास्त्री ने किया।

भेदाभेदवादे तु ब्रह्मण्येवोपाधिसंसर्गात् तत्प्रयुक्ता जीवगता दोषा ब्रह्मण्येव प्रादुःष्युरिति निरस्तनिखिलदोष-कल्याणगुणात्मकब्रह्मात्मभावोपदेशा हि विरोधादेव परित्यक्ताःस्युः ।

कल्पितभेदस्य निरास एवैतत्तादात्म्योपदेशावसेयः (फलम्) इति न वादात्म्योपदेशो निष्फल इत्याशङ्कते–कल्पितेति । उत्तरमाह–तत्त्विति, तत्=कल्पितभेदनिरसनम् । इत्युक्तम्="प्रकारद्वयपरित्यागे' इत्यादिनोक्तम् । भेदस्य कल्पितत्वे वस्त्वैक्ये च प्रकारद्वयाभावेन सामानाधिकरण्यमेव नोपपद्यते, यथा 'नीलो घटः' इत्यत्र नीलत्वघटत्वेतिप्रकारद्वयसत्त्वेमैव सामानाधिकरण्यं भिन्नप्रवृत्तिनिमित्तानामेव शब्दानामेकार्थबोधनस्य तल्लक्षणत्वात् तथा जगत्कारणत्वजीवशरीरकत्वेतिप्रकारद्वयसत्त्वे एव "तत्त्वमसि" इतिसामानाधिकरण्यमुपपद्यते इत्यर्थः । विपक्षे बाधकमाह–सामानेति, प्रकारद्वयमत्राद्वैतमतेन सर्वज्ञत्वमल्पज्ञत्वं च ग्राह्यम् । विरोधम्=वस्त्वैक्यविरोधम् । सर्वज्ञत्वाल्पज्ञत्वादिप्रकारद्वयस्य तत्त्वम्पदयोः प्रवृत्तिनिमित्तभूतस्यैकस्मिन् वस्तुन्यसम्भवादैक्यविरोधः स्पष्ट एव । प्रकारीभूतपदार्थसत्तया ब्रह्ममात्रसत्त्वं न सिध्येदित्यर्थः ।

प्रथममौपाधिकभेदाभेदवादे उक्ततादात्म्योपदेशस्यानुपपत्तिमुद्घाटयति–भेदाभेदेति, अत्राभेदः स्वयं भेदश्चोपाधिकृतस्तादृशोपाधिश्च ब्रह्मण्येव वर्तते तथा च तादृशोपाधिकृता ये जीवगता अल्पज्ञत्वादयो दोषास्ते तादृशोपाधिना ब्रह्मण्यपि प्राप्नुयुस्तत्कारणीभूतोपाधेर्ब्रह्मणि सत्त्वात् तथा च ब्रह्मणो

(विशेषण) द्वय के न होने से सामानाधिकरण्य ही उपपन्न नहीं होता है । जैसे नीलोघटः' में नीलत्व और घटत्व दो प्रकार (विशेषण) होने पर ही सामानाधिकरण्य बनता है—भिन्नप्रवृत्तिनिमित्त वाले शब्दों के द्वारा एक अर्थ का बोध कराना ही तादात्म्य का लक्षण है । तथा च जगत्कारणत्व और जीवशरीरकत्व दो प्रकार=विशेषण होने पर ही 'तत्त्वमसि' में सामानाधिकरण्य उपपन्न हो सकता है । इत्यर्थः । विपक्ष में बाधा बतलाते हैं—समानेति,—यहाँ अद्वैत मत से प्रकारद्वय सर्वज्ञत्व और अल्पज्ञत्व ग्राह्य हैं,विरोध यह है कि एक वस्तु स्वीकार करनेके पक्षमें–सर्वज्ञत्व अल्पज्ञत्व रूप प्रकार=विशेषण द्वय को तत् और त्वम् पद का प्रवृत्ति निमित्त स्वीकार करने पर इन दोनों की स्थिति एक वस्तु में असंभव होगी, इस प्रकार ऐक्य विरोध स्पष्ट ही है । प्रकारीभूत पदार्थ सत्ता के द्वारा ब्रह्ममात्र की सत्ता सिद्ध नहीं होगी । इत्यर्थः ।

प्रथम औपाधिक भेदाभेद वाद में उक्त तादात्म्योपदेश की अनुपपत्ति का उद्घाटन करते हैं—भेदाभेदेति, इस मत में अभेद स्वयं है और भेद उपाधिकृत है, ऐसी उपाधि ब्रह्म में ही है, तथा च, तादृश उपाधि से किये गये जो जीव में स्थित अल्पज्ञत्व आदि दोष हैं, वे तादृश उपाधि द्वारा ब्रह्म में

स्वाभाविकभेदाभेदवादेपि ब्रह्मणः स्वत एक जीवभावाभ्युपगमाद् गुणवद् दोषाश्च स्वाभाविका भवेयुरिति निर्दोषब्रह्मतादात्म्योपदेशा विरुद्धा एव ।

केवलभेदवादिनां चाऽत्यन्तभिन्नयोः केनापि प्रकारेणैक्यासंभवादेव ब्रह्मात्मभावोपदेशो न संभवतीति सर्ववेदान्तपरित्यागः स्यात् ।

निरस्तनिखिलदोषत्वं कल्याणगुणाकरत्वं च बाध्येतेति दोषः, तद्बाधेन च निरस्तनिखिलदोष ब्रह्मणा तादात्म्योपदेशा बाधिताः स्युः–सदोषस्य जीवस्य निर्दोषेण ब्रह्मणा तादात्म्यासंभवादित्यन्वयः ।

स्वाभाविके (निरुपाधिके) भेदाभेदवादे उक्ततादात्म्योपदेशानुपपत्तिमाह–स्वाभाविकेति, जीवभावस्य स्वाभाविकत्वे जीवत्वनिबन्धना अल्पज्ञत्वादयो दोषा अपि ब्रह्मणि स्वाभाविकाः स्युस्तथा च तेषां निवृत्तिरपि न स्यात्–स्वाभाविकत्वात् । तथा च ब्रह्मणः सदोषत्वे प्राप्ते निर्दोषब्रह्मणा तादात्म्योपदेशो बाधितः स्यात्, श्रुत्या च ब्रह्मणो निर्दोषत्वप्रतिपादनेन तादृशनिर्दोषब्रह्मणैव तादात्म्यमुपदिश्यते इति विरोधः । अत्र–'निर्दोषश्रुतिविरोधः फलितः" इति श्रुतप्रकाशिका ।

केवलभेदवादेप्युक्ततादात्म्योपदेशो नोपपद्यते इत्याह–केवलेति, यथा सर्वथा भेदाद् घटपटयोस्तादात्म्य न संभवति तथा जीवब्रह्मणोरपि सर्वथा भेदात् तादात्म्यं न संभवतीति ब्रह्मात्मभावोपदेशो

भी प्राप्त होंगे क्योंकि उन दोषों का कारण उपाधि है और वह उपाधि ब्रह्म में स्थित है । ऐसा होने पर ब्रह्म समस्त दोषों से रहित है तथा कल्याण गुणों का आकार है—यह कथन बाधित होगा । इसके बाध से, समस्त दोषों से शून्य ब्रह्म के साथ तादात्म्य कथन बाधित होंगे क्योंकि सदोष जीव का निर्दोष ब्रह्म के साथ तादात्म्य असंभव है । इत्यन्वयः ।

स्वाभाविक=निरुपाधिक भेदाभेदवाद में उक्त तादात्म्य के उपदेश की अनुपपत्ति कहते हैं—स्वाभाविकेति, जीवभाव के स्वाभाविक होने पर जीवत्वमूलक अल्पज्ञत्वादि दोष भी ब्रह्म में स्वाभाविक होंगे तथा च उनकी निवृत्ति भी नहीं होगी—स्वाभाविक (स्वीकार) होने के कारण । ब्रह्म की सदोषता प्राप्त होने पर निर्दुष्ट ब्रह्म के साथ तादात्म्य का उपदेश बाधित होगा, श्रुति द्वारा ब्रह्म की निर्दोषता का प्रतिपादन होने से उस निर्दोष ब्रह्म के साथ ही तादात्म्य का उपदेश किया गया है । यह स्पष्ट विरोध है । यहाँ श्रुतप्रकाशिका में कहा गया है कि—'निर्दोष श्रुतियों का विरोध फलित' (होता) है ।

केवल भेदवाद में भी उक्त तादात्म्योपदेश उपपन्न नहीं होता है—केवलेति, जैसे सर्वथा भेद होने के कारण घट और पट का तादात्म्य संभव नहीं है वैसे ही जीव और ब्रह्म का भी सर्वथा भेद होने से तादात्म्य कथन सम्भव नहीं होगा, इस प्रकार ब्रह्मात्मभाव (=सबकी ब्रह्मात्मकता) का

निखिलोपनिषत्प्रसिद्धं कृत्स्नस्य ब्रह्मशरीरभावमाऽऽतिष्ठमानैः कृत्स्नस्य ब्रह्मात्मभावोपदेशाः सर्वे सम्यगुपपादिता भवन्ति।

जातिगुणयोरिव द्रव्याणामपि शरीरभावेन विशेषणत्वे 'गौरश्वो मनुष्यो देवो जातः पुरुषः कर्मभिः' इति सामानाधिकरण्यं लोकवेदयोर्मुख्यमेव दृष्टचरम्। जातिगुण-

---

बाधित एव स्यात् तथा च सर्ववेदान्तपरित्याग एव प्राप्तः-वेदान्तानां विशेषतो ब्रह्मतादात्म्योपदेशपरत्वात् अस्मिन् मते ब्रह्मणो निमित्तकारणत्वमात्रस्वीकारादुपादानकारणताबोधकवाक्यानामपि बाध एवेति सर्ववेदान्तपरित्यागोत्र मते फलितः।

स्वमते साद्गुण्यमुपपत्तिं चाह—निखिलेति, "यस्यात्मा शरीरम्" इत्यादिना कृत्स्नस्य ब्रह्मशरीरत्वं प्रतिपादितं तदातिष्ठमानैः=तत्स्वीकर्तृभिरस्माभिः, शरीरशरीरिभावेन च तादात्म्यं सर्वप्रसिद्धमेवेति नोपपादनापेक्षा, तत्त्वमस्यादिप्रतिपाद्यं चोक्तमेव—जगत्कारणं तत्पदवाच्यं त्वंपदवाच्यं च जीवशरीरकं ब्रह्म तच्चैवमेवेति सर्वं समञ्जसम्। पूर्वं प्रतिपादितं च न विस्मर्तव्यम्।

"सम्यगुपपादिता भवन्ति" इत्युक्तं तत्र सम्यक्त्वं हि मुख्यत्वमेव स्यात् तत्र द्रव्याणां परस्परं भेदात् सामानाधिकरण्यं मुख्यं न संभवति किं तु गौणमेवेत्याशङ्क्य द्रव्याणां सामानाधिकरण्यस्यापि शरीरा-

---

उपदेश बाधित ही होगा। इस प्रकार समस्त वेदान्त का परित्याग ही प्राप्त है क्योंकि वेदान्त (=उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र, गीता) विशेषरूप से ब्रह्म तादात्म्य उपदेश परक ही हैं। इस मत में ब्रह्म को निमित्त कारण मात्र स्वीकार करने से, उपादन कारण (भी) ब्रह्म है—इसके बतलाने वाले वाक्यों का विरोध होगा। अतः इस मत में सर्व वेदान्त का त्याग फलित होता है।

अपने मत में गुणवत्ता तथा तादात्म्योपदेश की उपपन्नता को कहते हैं—निखिलेति, 'यस्यात्मा शरीरम्' आत्मा जिस (=ब्रह्म) का शरीर है, इत्यादि द्वारा समस्त प्रपञ्च को ब्रह्म का शरीर कहा गया है, इसको स्वीकार करने वाले हम लोगों द्वारा स्वीकार किया गया—शरीरशरीरीभाव रूप तादात्म्य सर्वप्रसिद्ध ही है, इसके उपपादन की कोई विशेष अपेक्षा नहीं है। 'तत्त्वमसि' आदि का प्रतिपाद्य कह ही चुके हैं - जगत् का कारण (सूक्ष्मचिदचिद्विशिष्ट ब्रह्म) तत् पद वाच्य है, और जीव

शरीरक (स्थूलचिदचिद्विशिष्ट) ब्रह्म त्वम् पद वाच्य है, (दोनों अवस्थाओं में) ब्रह्म एक ही है, अतः सर्व सामञ्जस्य प्राप्त है। इसका प्रतिपादन पहले कर चुके हैं, यह विस्मरण करने योग्य नहीं है।

'साम्यगुपपादिता भवन्ति' जो कहा गया इसमें सम्यक्त्व-मुख्यत्व है, द्रव्यों का परस्पर भेद होने से सामानाधिकरण्य मुख्य अर्थात् वाच्य नहीं होता है किन्तु गौण=लाक्षणिक ही हुआ करता है ऐसी आशङ्का करके, द्रव्यों का सामानाधिकरण्य भी शरीरात्मभाव मूलक होने पर ही मुख्य होता

योरपि द्रव्यप्रकारत्वमेव 'खण्डो गौः शुक्लः परः' इतिसामानाधिकरण्यनिबन्धनम् । मनुष्यत्वादिविशिष्टपिण्डानामप्यात्मनः प्रकारतयैव पदार्थत्वात् 'मनुष्यः पुरुषः षण्डो योषिदाऽऽत्मा जातः' इति सामानाधिकरण्यं सर्वत्रानुगतमिति प्रकारत्वमेव

त्मभावमूलकत्वे मुख्यत्वं भवतीत्युपपादयति—जातिगुणयोरिति, यथा 'खण्डो गौः मुण्डो गौः' इत्यादौ गोत्वादिजाति वाचकगवादिशब्दानां व्यक्तिवाचकखण्डादिशब्दैः सह सामानाधिकरण्यं मुख्यमेव यथा च शुक्लः पटः कृष्णः पटः'इत्यादौ शुक्लत्वादिगुणवाचकशब्दानां पटादिशब्दैःसामानाधिकरण्यं मुख्यमेव—लक्षणादिकं विनैव पदैः शक्त्यैकपदार्थबोधकत्वात् जातिगुणशब्दानां धर्मिवाचकत्वसंभवात् तथा द्रव्याणामपि यदि शरीरभावेन विशेषणत्वं भवति तदा सामानाधिकरण्यं मुख्यमेव भवति यथा 'कर्मभिः पुरुषः=आत्मा गौर्जातोऽश्वो जातः कदाचिन्मनुष्यो जातः' इत्यत्र गवादिदेहद्रव्याणां शरीरत्वेनैव विशेषणत्वमस्तीति 'आत्मा गौर्जातः' इत्यादिसामानाधिकरण्यं सर्वत्र मुख्यमेव, तथा च चिदचिदात्मक-प्रपञ्चस्य शरीरभावेनैव ब्रह्मविशेषणत्वात् ब्रह्मप्रपञ्चवाः वाकशब्दानाम् "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" इत्यादिसामानाधिकरण्यं मुख्यमेव तथा "तत्त्वमसि" इत्यादि सामानाधिकरण्यमपि मुख्यमेव न तु गौणमिति "सम्यगुपपादिताः" इतियदुक्तं तद्युक्तमेव । 'खण्डो गौः शुक्लः पटः' इत्यादिकस्य जातिगुणयोरपि

है अन्यथा मुख्य नहीं होता है । इसका उपपादन करते हैं—जाति गुणयोरिति, जैसे खण्डो गौः' 'मुण्डो गौः' इत्यादि में गोत्वादि जाति वाचक गो प्रभृति शब्दों का व्यक्तिवाचक खण्डादि शब्दों के साथ सामानाधिकरण्य मुख्यही होता है और जैसे'शुक्लः पटः'कृष्णः पटः आदि शुक्लत्वादि गुणवाचक शब्दों का पटादि शब्दोंके साथ सामानाधिकरण्य मुख्यही होता है लाक्षणिक नहीं होता है,लक्षणादि के बिना ही पद, अभिधाशक्ति से ही, एक पदार्थ का बोध कराते हैं क्योंकि जातिवाची तथा गुणवाची शब्दों का धर्मीवाचक होना सम्भव होता है । वैसे ही द्रव्यों का भी यदि शरीरभाव से विशेषण बनना निश्चित होता है, तब सामानाधिकरण्य मुख्य ही होता है, जैसे—'कर्मभिः पुरुषः=आत्मा, गौर्जातोऽश्वोजातः कदाचिन्मनुष्यो जातः ।' कर्मों के अनुसार आत्मा कभी गो, कभी घोड़ा कभी मनुष्य बना है । इस वाक्य में गोआदि देह द्रव्य हैं, शरीर भाव से विशेषण बनते हैं 'आत्मा गौ र्जातः' आत्मा गौ बना इत्यादि सामानाधिकरण्य सर्वत्र मुख्य ही है । वैसे ही—चिदचिदात्मक प्रपञ्च शरीर भाव से ही ब्रह्म का विशेषण होता है । 'ब्रह्मप्रपञ्चो, वाक् शब्दानाम् । 'सर्वं खल्विदं ब्रह्म' इत्यादि सामानाधिकरण्य मुख्य ही है, तथा 'तत्त्वमसि' इत्यादि सामानाधिकरण्य भी मुख्य ही है—गौण नहीं है, अतः 'सम्यगुपपादिताः' जो कहा गया वह ठीक ही कहा गया है । 'खण्डो गौः' 'शुक्लो पटः' इत्यादि जाति वाची और गुणवाची शब्दों का भी द्रव्यवाचक शब्दों के साथ सामानाधिकरण्य मुख्य

पुरी में भागवती कथा सुसम्पन्न

मोक्षदायिनीपुरी (उड़ीसा)में श्रीमद्भागवत कथा सुसम्पन्न। जगदाचार्य परमार्थरत्न वै० वा० स्वामी मधुसूदनाचार्यजी महाराज के सङ्कल्पानुसार २० जुलाई से २६ जुलाई '९५ तक पुरी में श्रीमज्जगद्गुरु रामानुजाचार्य स्वामी माधवाचार्यजी महाराज के श्रीमुख से अमृतमयी भागवती कथा सन्त, महान्त, विद्वान् एवं भारत के प्रत्येक प्रान्त से आये हुए भक्तों ने पान किया। कथा-स्थल समुद्र के किनारे 'मानव सेवा संघ' का विशाल हाल था, भगवान् की सन्निधि में एक दिन कार्यक्रम हुआ। प्रभात फेरी भी होती रही। स्वामीजी के उत्तराधिकारी युवराज स्वामी श्रीधराचार्यजी ने देववाणी में विद्वानों का स्वागत किया। विशाल शोभायात्रा निकाली गई। जिसका जीयर मठ में विश्राम हुआ। २७ जुलाई को यज्ञ एवं विशाल भण्डारा हुआ, जिसमें पुरी के सभी मठाधीशों का भी आगमन हुआ, स्वामी श्रीगरुड़ध्वजाचार्यजी महाराज का योगदान सराहनीय रहा।

श्रीमनोरमादेवी सोमानी द्वारा आयोजित धार्मिक आयोजन

श्रीमद्भागवत सप्ताह कथा प्रवचन श्रीहरिद्वार सप्त सरोवर मार्ग के पावन क्षेत्र में दि० २ सितम्बर '९५ से जगद्गुरु श्रीस्वामी श्रीनिवासाचार्यजी महाराज नागौरियामठाध्यक्ष द्वारा कथामृत पान कराया जायगा।

श्रीशुकताल में दि० २५ सितम्बर '९५ से १०८ श्रीमद्भागवत पाठ और भारत प्रसिद्ध श्री श्रीजी बाबाजी महाराज, मथुरा द्वारा प्रवचन होगा।

सवाई माधोपुर में श्रीमद्भागवत सप्ताह ज्ञानयज्ञ सम्पन्न

सवाई माधोपुर, विजयेश्वर महादेव ट्रस्ट मन्दिर बजरिया में श्रीमद्भागवत ज्ञानयज्ञ का आयोजन दि० १३-९-९५ से दि० २१-९-९५ सोमवार तक सम्पन्न हुआ। जिसमें विद्वान् सन्त ज०गु० रा० स्वामी श्रीरामचन्द्राचार्यजी महाराज (बैहटा जंगल) वालों ने व्यासपीठ पर आसीन होकर श्रीकृष्ण लीलाओं की अमृतमय वर्षा करके भक्तों को परमानन्द प्रदान किया।

विनीत—श्रीलक्ष्मीनारायण सत्संग समिति, बजरिया, सवाई माधोपुर

उक्त श्रीस्वामीजी महाराज का श्रीमद्भागवत सप्ताह का आयोजन दि० १ सितम्बर '९५ से दि० ८ सितम्बर '९५ तक राणीसती मन्दिर प्रांगण में, अग्रसेन धर्मशाला पालीरोड डेहरी ओनसोन रोहतास मण्डल (बिहार) में होगा।

निवेदक—श्रीउपेन्द्राचार्यजी

श्रीबदरीनारायण में १०८ श्रीमद्भागवत सप्ताह सुसम्पन्न

अनन्तश्री विभूषित वै० वा० स्वामी श्रीशालग्रामाचार्यजी शास्त्री महाराज की सत्प्रेरणा से श्रीबदरीनारायण धाम में १०८ श्रीमद्भागवत सप्ताह ज्ञान महायज्ञ का विराट् आयोजन श्रीस्वामी केशवाचार्यजी (बालक स्वामी) वाराणसी के व्यासत्व में दि० १५ जुलाई से दि० २२ जुलाई '९५ तक भगवन्मुखोल्लासार्थ सुसम्पन्न हुआ। इस आयोजन में अनेक भक्तों ने आकर भगवद्दर्शन, श्रीभागवत प्रवचन श्रवणकर अपना आत्मोज्जीवन किया। यह समारोह सुनियोजित एवं सुखद सुसम्पन्न हुआ

आयोजक—समस्त भागवत एवं भक्तगण इन्दौर, बम्बई, बाराणसी, खिड़किया, बेटमा

श्रीझूलोत्सव एवं श्रीवैकुण्ठोत्सव

श्रीमोहनलाल मेघराज काबरा, वेंकटेश नगर सांगली ने कार्यस्थल जेठाभाई, अमराई पास, सांगली में श्रीवेङ्कटेशजी का झूलोत्सव एवं वै० वा० सेठ श्रीफूलचन्दजी काबरा, वै०वा० श्रीमती रामीबाई काबरा का श्रीवैकुण्ठोत्सव अनन्तश्री श्री १००८ श्रीस्वामी सुदर्शनाचार्यजी महाराज की सन्निधि में दि० ६-८-९५ गुरुवार से दि० १०-८-९५ सोमवार तक सानन्द सुसम्पन्न हुआ। भगवत् भागवत मुखोल्लास हुआ।

प्रेषक—मोहनलाल, हरिकिशन एवं समस्त काबरा परिवार

रजि० नं० एम० टी० आर० 200

अनन्त-सन्देश के उद्‌देश्य

सर्वसाधारण भगवत्प्रेमानुरागियों को प्रभु प्रेम-रसामृतपान कराकर मानव समाज को पूर्ण सुख शान्ति प्रदान करते हुए ईश्वरोन्मुख होने में उत्पन्न भ्रम, विवाद एवं परस्पर द्वेष को समूल नष्ट करना और भगवत्प्रेम के दिव्य आदेश को उपस्थित करना साथ ही पूज्य श्रीकांची प्र० भ० अनन्त श्रीविभूषित श्रीस्वामी अनन्ताचार्यजी महाराज के सदुपदेशों का प्रचार-प्रसार व श्रीवैष्णव सम्प्रदाय की वृद्धि इस मासिक-पत्र का उद्देश्य है।

नियम

यह पत्र शुद्ध पारमार्थिक पथ का पोषक है।

सम्पादक सम्बन्धी

१—इस पत्र में भगवत् प्रेम सम्बन्धी, ज्ञान, भक्ति प्रपत्ति के भावपूर्ण लेख एव कवितायें ही प्रकाशित हो सकेंगीं।

२—लेख स्पष्टतया कागज के एक ओर लिखकर भेजना चाहिये।

३—लेखों के घटाने-बढ़ाने, छापने न छापने आदि का पूर्ण अधिकार सम्पादक को होगा।

४—लेख, कविता तथा सम्बन्धित-पत्र सम्पादक अनन्त-सन्देश, वृन्दावन, उ०प्र० के पते पर भेजना चाहिए जो माह की १० तारीख तक मिल सकें।

५—विवादास्पद एव अधूरे लेख स्वीकृत न होगे।

६—किसी लेखक के मत के उत्तरदायी सम्पादक नही होंगे।

७—सम्पादक सम्बन्धी समस्त लिखा-पढ़ी निम्न पते पर करनी चाहिए।

—पत्र व्यवहार के पते—

सम्पादक—

श्रीरङ्गनाथ प्रेस

वृन्दावन (मथुरा) उ० प्र०, फोन : ४४२१३१

'अनन्त सन्देश' मासिक पत्र

पो० वृन्दावन २८११२१ (मथुरा) उ०प्र०

ग्राहक सं०—

सेवा में

इस पत्र के व्यवस्थापक एवं मालिक श्रीवेङ्कटेश देवस्थान ८०/८४ फणसवाड़ी बम्बई—२ ने सम्पादक पं. श्रीकेशवदेव शास्त्री द्वारा श्रीरङ्गनाथ प्रेस, रङ्गजी का पश्चिम कटरा, वृन्दावन से छपवाकर प्रकाशित किया।